THE FREE INDOLOGICAL COLLECTION

WWW.SANSKRITDOCUMENTS.ORG/TFIC

FAIR USE DECLARATION

This book is sourced from another online repository and provided to you at this site under the TFIC collection. It is provided under commonly held Fair Use guidelines for individual educational or research use. We believe that the book is in the public domain and public dissemination was the intent of the original repository. We applaud and support their work wholeheartedly and only provide this version of this book at this site to make it available to even more readers. We believe that cataloging plays a big part in finding valuable books and try to facilitate that, through our TFIC group efforts. In some cases, the original sources are no longer online or are very hard to access, or marked up in or provided in Indian languages, rather than the more widely used English language. TFIC tries to address these needs too. Our intent is to aid all these repositories and digitization projects and is in no way to undercut them. For more information about our mission and our fair use guidelines, please visit our website.

Note that we provide this book and others because, to the best of our knowledge, they are in the public domain, in our jurisdiction. However, before downloading and using it, you must verify that it is legal for you, in your jurisdiction, to access and use this copy of the book. Please do not download this book in error. We may not be held responsible for any copyright or other legal violations. Placing this notice in the front of every book, serves to both alert you, and to relieve us of any responsibility.

If you are the intellectual property owner of this or any other book in our collection, please email us, if you have any objections to how we present or provide this book here, or to our providing this book at all. We shall work with you immediately.

-The TFIC Team.

श्री

जैनमत वृक्ष.

न्यायांभोनिधि तपगच्छाचार्य
श्रीमद्विजयानंद सूरि अपरनाम
आत्मारामजी महाराज कृत.

छपावी प्रसिद्ध करनार.

श्री आत्मानन्द जैनसभा पंजाब.

धी डायमंड ज्युबिली प्रेस.

अमदावाद.

संवत् १९५६ सने १९००

श्री आत्मानंद जैनसभा पंजाब.

सर्व हक स्वाधीन.

श्री डायमन्ड ज्युबिली प्रीन्टिंग प्रेसमां छाप्युं.

॥ ॐ ॥

विदित होवे कि, यह जैनमत वृक्ष नामा ग्रंथ, ग्रंथकर्त्ताने किस मिहनतसें बनायाहै; सो मिहनत तो, असली वृक्षके समान, मुंबाइमें छपे हुए "जैन मत वृक्ष" से मालुम होतीहै. परंतु अपशोस है कि, वो जैसा कि लोकोपयोगी होनेका ख्याल रखतेथे, नही हुआ. बडी भारी खराबी तो उसमें यह हुईहै कि, वो वृक्ष लाल श्याहीसें छपाहै, जिससें कइ जगापर अक्षर साफ साफ खुले नहीहै; और कइ जगा अक्षर बिलकुल उडगएहै. जिससें वांचने वालेको, ठीक ठीक मतलब नही मिलताहै; दूसरी खराबी यह है कि, वांचने वालेको कभी किधर मुख करना पडताहै, और कभी किधर, इस तकलीफसें भी लोक उस वृक्षको शोखसें देख नही शक्तेहैं. तीसरी खराबी यह है कि, जिसके वास्ते पुनरावृति करनेकी खास जरूरतथी. वो खराबी यह है कि, अतीव अशुद्ध छप गया है. बेशक सीसे में जडवाके नमुनेके वास्ते रखना कोई चाहे तो रख शक्ताहै, और मकानको शोभाभी देशक्ताहै; परंतु जिस फायदेके वास्ते ग्रंथकर्त्ताने

बनायाहै, वो फायदा नही पहुंच शक्ताहै. इस वास्ते ग्रंथकर्त्ताकी आज्ञानुसार पढने वालेको सुगमता होनेके वास्ते, वृक्षकी ढब हटाकर, किताबकी ढबपर लिखा गयाहै, तोभी नामतो वोही रखाहै. क्योंकि, प्रथम "जैनमत वृक्ष" के नामसेंही प्रसिद्ध होचुकाहै. और अब इस किताबके साथभी, छोटासा वृक्ष, दिया गयाहै; जिसमें नंबर दिये है, उस नंबरका ध्यान पढनसें, पढने वालेको ठीक ठीक पता लग जाताहै. इस वास्ते सज्जन पुरुषोंको चाहिये कि, अथसें इति तक, इस ग्रंथको देखके, ग्रंथकर्त्ताके प्रयासको सफल करें.

संवत्–१९४९ फाल्गुन शुक्ला दशमी–

हाल मुकाम गुरुका झंडीयाला

जिल्ला अमृतसर

देश पंजाब.

मुनि–वल्लभ विजयने लिखा

ग्रंथकर्त्ताकी आज्ञासें.

शुद्धिपत्र.

पृष्ठ	लीटी	अशुद्ध	शुद्ध
१	२	श्री वीतरागायन मोस्तु	श्री वीतरागाय नमोस्तु
४	१५	नित्य प्रतिचार	नित्यप्रतिचार
,,	,,	सुना तेथे	सुनातेथे
,,	१८	उच्चार न	उच्चारन
५	२०	आ हिताग्नय	आहिताग्नय
६	१२	आवश्य कादि	आवश्यकादि
८	१	सर्वव्य वच्छेद हो गये	सर्व व्यवच्छेद होगये
८	२	भीन	भी न
८	११	कितिस	कि तिस
९	१७	हिंतेठ विया असंज	हिंते ठविया असंज
,,	१८	काहि आतेहिं	काहिआ तेहिं
१०	२	धर्म काव्य	धर्मकाव्य
,,	७	ब्राह्मणा भासोंने	ब्राह्मणाभासोंने
१२	८	मरूत	मरुत
,,	९	ब्राह्मणा भासोंके	ब्राह्मणाभासोंके
,,	१०	सौ निकोंकीतरे	सौनिकोंकीतरे
,,	११	ब्राह्मणा भास	ब्राह्मणाभास
,,	१३	मरूत	मरुत
,,	१४	,,	,,
,,	२०	सुनातहूं	सुनाताहूं
१५	२	विद्वंस	विध्वंस
१५	१०	पूछाकि,	पूछा, कि
१६	५	परसस्पर	परस्पर
,,	१५	होवे?	होवे.

१७	११	कुक्कुडके	कुक्कडके
”	१८	मारकें	मारके
१९	१	गइकि	गईकि
१९	२०	शिख लायाथा	शिखलायाथा
२०	७	धर्मो पदेष्टाका	धर्मोपदेष्टाका
”	१५	च्छेद	छेद
२१	१६	मरेकों	मेरेकों
”	१७	गुरूकीतरें	गुरुकीतरें
”	१८	गुरू	गुरु
२३	४	गुरूजीनें	गुरुजीनें
२३	१३	गुरूर्वाख्य दिति	गुरुर्व्याख्यदिति
२४	७	ईस	इस
”	८	”	”
”	११	पूत्र	पुत्र
”	१५	वनाइ	वनाई
२५	१४	तेरेंसे	तेरेसें
”	१६	असूर	असुर
”	१७	पुछाकि	पुछा, कि
”	१८	कहाकि,	कहा, कि
”	२०	दिती	दिति
२६	१	सुलासाका	सुलसाका
”	३	राजा ओमेंसु	राजाओमेंसु
२६	१०	गइ	गई
”	१५	जीनांसे	जिनोंसें
”	१९	हूइ	हूई
”		मधुपिंगलनामामेरा	मधुपिंगलनामा मेरा
२७	२०	वनाइ	वनाई
”	१५	लक्षणहिन	लक्षणहीन

२८	४	असूर	असुर
३०	१०	देखाता	दिखाता
,,	११	गइ	गई
३१	१७	जौ	जो
,,	,,	द्वपायन	द्वैपायन
,,	,,	नामकेंसे	नामसें
३३	१८	सापित	शापित
,,	१	पीप्पलाद	पिप्पलाद
,,	१२	करणे	करने
,,	१८	पीपलके	पिप्पलके
३५	१	आइ	आई
,,	४	अपणे	अपने
३६	३	उत्पत्ति	उत्पत्ति
,,	११	अवठ	औवट
३७	४	पिहिता श्रव-	पिहिताश्रव-
,,	१८	मूनिका	मुनिका
,,	,,	जीसका	जिसका
३८	६	प्रव्रज्जा	प्रव्रज्या
३९	१	आइ	आई
४०	२	ककुदाचार्य	कक्कसूरि
४१	१५	सौ	सो
,,	१७	हू आपी छे	हूआ पीछे
४१	१८	ईनाकी	इनोंकी
,,	१९०	सरिषी	सरिखी
४२	१३	श्री महावीरके	श्रीमहावीरके
४३	१८	उपसर्ग हर	उपसर्गहर

४४	११	हूइ	हूई
४४	२०	पाठ कथे	पाठी थे
४५	३	हो गये	होगये
,,	९	सूत्रो परिभाष्य	सूत्रोपरिभाष्य
४६	३	जीसमें	जिसमें
,,	७	वनवाइ	वनवाई
,,	९	बनवाइ	वनवाई
,,	१३	हूइ	हूई
४८	१८	स्थावर	स्थविर
,,	१९	फुल	कुल
,,	२०	हारीयमा लागारी	हारीयमालागारि
५१	१७	आर्यज्यंत	आर्यजयंत
५४	८	शत्रुंज्य	शत्रुंजय
,,	९	,,	,,
,,	१३	कोरंटन	कोरंट
५६	६	मुलसंघ	मूलसंघ
,,	१६	वहु तही	वहुतही
५७	१	(५७)	(५७) (४०)
५८	१५	मूलश्रुद्धि	मूलशुद्धि
६१	७	गुरूभाइ	गुरुभाइ
६२	१२	श्री जिनलाभसरि	श्री जिनलाभसूरि
,,	१९	मुनिचंद्रसुरिके	मुनिचंद्रसूरिके
,,	२०	निकला	निकाला
६७	४	नही	नही अंगी
७३	१४	यहा सें	यहांसें

॥ ॐ ॥

॥ श्री वीतरागायन मोस्तुतराम् ॥

"अथ श्री जैनमत वृक्षः"

(१)

जैनमत के शास्त्रानुसार यहजगत् प्रवाहसें अनादि चला आताहै, और सत्य धर्म के उपदेशकभी प्रवाहसें अनादि चले आतेहै. इस संसार में अनादिसें दोदो प्रकारका काल प्रवर्त्तताहै, एक अवसर्प्पिणी काल, अर्थात् दिन दिन प्रति आयुः, बल, अवगाहना प्रमुख सर्व वस्तु जिसमें घटती जातीहै, और दूसरा उत्सर्प्पिणी काल, जिसमें सर्व अच्छी वस्तुकी वृद्धि होती जातीहै. इन पूर्वोक्त दोनुं कालोंमें अर्थात् अवसर्प्पिणी–उत्सर्प्पिणीमें, कालके करे छ छ विभाग है. अवसर्प्पिणीका प्रथम, सुषम सुषम, (१) सुषम, (२) सुषम दुषम, (३) दुषम सुषम, (४) दुषम, (५) दुषम दुषम, (६) है. उत्सर्प्पिणीमें छहो विभाग उलटे जानलेने. जब अवसर्प्पिणी काल पूराहोताहै, तब उत्सर्प्पिणी काल शुरू होताहै. इसीतरें अनादि अनंत कालकी प्रवृत्तिहै; और हरेक अवसर्प्पिणी उत्स-

र्पिणी के तीसरे चौथे आरे अर्थात् काल विभागमें, चौवीस २४ अरिहंत तीर्थंकर, अर्थात् सच्चे धर्म के कथन करनेवाले उत्पन्न होते है. ऐसे अतीत कालमें अनंत तीर्थंकर हो गयेहै, और आगामी कालमें अनंत होवेंगे; परंतु इस अवसर्पिणी कालमें छ हिस्सों मेसें तीसरा हिस्सा थोडासा शेष रहा, तब नाभिकुलकरकी मरुदेवा भार्याकी कूखसें श्री ऋषभदेवजीने जन्म लीया. तिस ऋषभदेवसें पहिलें, सर्व मनुष्य वनफल खातेथे, और वनोंहीमें रहतेथे, तथा धर्म, अधर्म, आदि जगत् व्यवहार कों अच्छीतरेंसें नही जानतेथे. श्री ऋषभदेवकों पूर्व जन्मके करे जपतपादिके फलसें, गृहस्था वस्था मेंही, मति, (१) श्रुति, (२) और अवधि, (३) यहती न ज्ञानथे, तिनके बलसें राज्य व्यवहार, जगत् व्यवहार, विद्या, कला, शिल्प, कर्म, ज्योतिष, वैदिकादि सर्व व्यवहार श्री ऋषभदेवनें प्रजाकों बतलाये. इसहेतुसें श्री ऋषभदेवके ब्रह्मा, ईश्वर, आदीश्वर, प्रजापति, जगत् स्रष्टा, आदिनाम प्रसिद्ध हूए. ऋषभदेवनें राज्य अपने बडे पुत्र भरतकों दीना, जिसके नामसें यह भरतखंड प्रसिद्ध हूआ. और आप स्वयमेव दीक्षालेके, पृथिवी

ऊपर विचरने लगे. जबउनोंकों, केवलज्ञान, उत्पन्न हूआ, तब तिनोंनें प्रजाकों धर्मोपदेशदीया. इस अवसर्पिणी कालमें, प्रथम, ऋषभदेवसें ही इस भारत वर्षमें जैन धर्म प्रचलित हूआ, इसी हेतुसें श्री ऋषभदेवसें, इस इतिहास (तवारिख) रूप वृक्ष का- लिखना शुरू कीया है. इनोंके, ८४, गणधर, और, ८४, गच्छ हूए. इनोंका विशेष वृत्तांत जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति, आवश्यक सूत्र, त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरितादि ग्रंथों में है.

अ—श्री ऋषभदेव स्वामीका शिष्य मरिची जब संयमपालने सामर्थ न हूआ, तब तिसने स्वकल्पना सें परिव्राजकका वेष धारण करा. तिसका शिष्य कपिलमुनि हूआ, तिसनें अपने आसुरिनामा शिष्यकों पंचवीश (२५) तत्वोंका उपदेश करा. तब आसुरिने षष्टि तंत्रनामा अपने मतका पुस्तक रचा, तिस आसुरिका भार्गारि नामा शिष्य हूआ, तिस पीछे तिस मतके ईश्वर कृष्णादि आचार्य हूए. तिनमें एक 'संख' नामा बहुत प्रसिद्ध आचार्य हूआ, तिसके नामसें कापिलमतकों लोक 'सांख्यमत' कहने लगे. यह सांख्यमत निरीश्वरी

कहा जाता है. पीछे पतंजलि मुनि तिनकें मतमें हूआ, तिसने ईश्वर सांख्यमत, और योगशास्त्र चलाया, परंतु हिंसक यज्ञ किसीभी सांख्यमत-वालेनें नही निकाला है. यह वृत्तांत आवश्यक सूत्रादि ग्रंथोंमें है.

व—श्री ऋषभदेवके बडे पुत्र भरतने षट्खंडका राज्य, और चक्रवर्तिकी पदवी पाई, तिसने श्री ऋषभदेवके उपदेशसें ऋषभदेव भगवान्की स्तुति, और गृहस्थ अर्थात् श्रावक धर्मके निरूपक चार वेद, श्रावक ब्राह्मणों के पढने वास्ते रचे, तिनके चार नाम रक्खे. "संसारादर्शनवेद, (१) संस्थापनपरामर्शनवेद, (२) तत्वावबोधवेद, (३) विद्याप्रबोधवेद, (४)" ईन चारों वेदोंका पाठ, भरत महाराजा के मेहेल के श्रावक लोक पठन पाठन करतेथे, और भरत राजा के कहने सें नित्य प्रतिचार वाक्य भरतको सुना तेथे यथा जितो भवान्, (१) वर्द्धतेभयं, (२) तस्मात्, (३) महान माहन, (४) ईनमें पीछले 'माहन' शब्द के वारंवार उच्चार न करने सें लोकोंने तिन श्रावकों का नाम माहन, और ब्रह्मचर्य के पालने सें उन ही माहनोंका नाम ब्राह्मण प्रसिद्ध करा. यह चारों

आर्यवेद, और सम्यग् दृष्टि ब्राह्मण, यह दोनों वस्तु यें श्री सुविधिनाथ पुष्प दंततक यथार्थ चली. तथा जब श्री ऋषभदेवका कैलास (अष्टापद) पर्वत के उपर निर्वाण हूआ, तब इंद्रादि सर्व देवता निर्वाण महिमा करने कों आये. तिन सर्व देवताओंमें सुं अग्निकुमार देवतानें श्री ऋषभदेवकी चितामें अग्नि लगाई. तबसें ही यह श्रुति लोकमें प्रसिद्ध हूई है. "अग्नि मुखा वै देवाः" अर्थात् अग्निकुमार देवता सर्व देवताओंमें मुख्य है. और अल्प बुद्धियोंने तो यह श्रुतिका अर्थ ऐसा बनालीया है, कि अग्नि जो है, सो तेतीसक्रोड ३३००००००, देवताओंका मुख है. और जब देवताओंने श्री ऋषभदेवकी दाढा वगैरे लीनी, तब श्रावक ब्राह्मण मिलकर देवताओंकों अति भक्तिसें याचना करते हूए, तब देवता तिनकों बहुत जान करकें बडे यत्नसें याचनासें पीडे होए देखकर कहते हूए कि, अहो याचकाः! अहो याचकाः! तब हीसे ब्राह्मणोंकों याचक कहने लगे. तथा ब्राह्मणोंने श्री ऋषभदेवकी चितामेंसें अग्नि लेकर अपने अपने घरों में स्थापन करा, तिस कारणसें ब्राह्मणकों आहिताग्नय कहने लगे. तथा श्री ऋषभ-

देवकी चिता जले पी छें दाढादिक सर्वतो, देवता ले गये, शेष भस्म अर्थात् राख रह गई, सो ब्राह्मणों नें थोडी थोडी सर्व लोकोंकों दीनी, तिस राखकों लोकोंने अपने मस्तक उपर त्रिपुंड्रा कारसें लगाई, तब सें त्रिपुंड्र लगाना शुरू हूआ. यह सर्व वृत्तांत आवश्यक सूत्रादि ग्रंथोंमें है.

(२)

श्री अजितनाथ अरिहंत, तिनके ९५ गणधर, और, ९५ गच्छ गणधर उसकों कहते है, जो प्रथम बडे शिष्योंमें द्वादशांगीके जानकार, और १४ चौदह पूर्व के गूंथने अर्थात् रचने वाले होते है.

श्री अजितनाथ अरिहंत के वखत में दूसरा सगर चक्रवर्त्ती हूआ. यह कथन आवश्य कादि सूत्रों में है.

(३)

श्री संभवनाथ अरिहंत, तिनके १०२, गणधर, और, १०२, गच्छ. जिन साधुओंकी एक सरिषी वांचना होवे, तिनका समुदाय; अथवा घणे कुलोंका समूह होवे, सो, गच्छ; अर्थात् साधुओंका समुदाय. यह कथन श्री आवश्यक सूत्रादि ग्रंथों में है.

(४)

श्री अभिनंदननाथ अरिहंत, तिनके ११६, गण-

धर, और, ११६, गच्छ. आवश्यकादौ.

(५)

श्री सुमतिनाथ अरिहंत, तिनके १००, गणधर, और, १००, गच्छ. आवश्यकादि सूत्रे.

(६)

श्री पद्म प्रभ अरिहंत, तिनके १०७, गणधर, और, १०७, गच्छ. आवश्यकादौ.

(७)

श्री सुपार्श्वनाथ अरिहंत, तिनके ९५, गणधर, और, ९५, गच्छ. आवश्यकादौ.

(८)

श्री चंद्रप्रभ अरिहंत, तिनके ९३, गणधर, और, ९३, गच्छ. आवश्यकादौ.

(९)

श्री सुविधिनाथ पुष्पदंत अरिहंत, तिनके ८८, गणधर, और, ८८, गच्छ. यह कथन श्री आवश्यकादि सूत्रों में है.

अ—श्री सुविधिनाथ पुष्पदंत अरिहंत के निर्वाण हूआं पीछे, कितनेक कालतक, जैनशासन, अर्थात् द्वादशांग गणिपिडग, साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका, और चारों आर्यवेद, और तिन के पठन पाठन

करनेवाले जैन ब्राह्मण, यह सर्वथ्य व्युच्छेद हो गये; भारत वर्षमें जैन धर्मका नाम निशान भी न रहा, तबतिन ब्राह्मणोंकी संतान थी, तिनको लोकोंने कहा, कि हमकों धर्मोंपदेश करो, तबतिन ब्राह्मणाभासों-ने, अनेक तरेंकी श्रुतियां रची. तिनमें, इंद्र, वरुण, पूषा, नक्त, अग्नि, वायु, अश्विनौ, उषा, इत्यादि देवताओंकी उपासना करनी लोकोंको उप-देश करा. और अनेकतरेंके यजन याजन करवाए. और कहने लगेकि, हमने ईसीतरें अपने वृद्धों के मुखसें सुना है. इस हेतुसें तिनश्लोकोंका नाम श्रुति रक्खा, क्योंकि तिस समयमें सत्य ज्ञानवाला, कोइ भीनहीथा, इस वास्ते जो तिनकों अच्छा लगा, सोइ अपना रक्षक देवमानके तिसकी स्तुति करी. और कन्या, गौ, भूमी, आदि दानके पात्र अपने आपकों ठहराये, और आप जगद्गुरुसर्वोपरि विद्यावंत बन गये. और लोकोंसें, पूर्वोक्त अपनी रची श्रुतियोंकों, वेदके नामसें प्रचलित करते हुए. ऐसें सांप्रतिकालमें माने ब्राह्मणोंके वेदकी उत्पत्ति हूइ. पीछे अनेक तरेंकी श्रुतियां रचते गये, और म-नमाना स्वकपोल कल्पित व्यवहार चलाते गये; और

अपने आपकों सर्वमें मुख्य ठहराये. यह कथन श्री भगवती सूत्र, आवश्यक सूत्र, आचार दिनकर आदि ग्रंथों में है.

(१०)

श्री शीतलनाथ अरिहंत, तिनके ८१, गणधर, और, ८१, गच्छ. आवश्यकादौ.

अ—जब श्री शीतलनाथ दशमें अरिहंत हूए, तब तिनोंने फिर जैनधर्मकी प्रवृत्ति करी; परंतु जंगली ऋषि ब्राह्मणोंनें तिनका उपदेश न माना किंतु भगवान् शीतलनाथके विरूद्ध प्ररूपणा करके, वेद धर्म ऐसा नाम रखके एकमत चलाया. तिसमतकों बहुत लोक मानने लगे, तब वेद धर्म जगत्में प्रसिद्ध हूआ. ऐसेंही श्री धर्मनाथ तीर्थंकर भगवान् तक सर्व जगे कितनेक काल जैन धर्म व्यवच्छेद होता गया, और वेद धर्म प्रबल हो गया. यदुक्तमागमे—"सिरि भरहचक्कवट्टी आयरिय वेयाण विस्सु उप्पत्ति माहण पढणत्थमिणं कहियं सुहझाण विवहारं ॥ १ ॥ जिणतित्थेवुच्छिण्णे मिछत्ते माहणे ठविया अ संजयाण हूआ अप्पाणं कहि आतेहिं ॥२॥" इनदोनों गाथाका भावार्थ यहहै. श्री ऋषभदेवके पुत्र भरत

चक्रवर्तिसें आर्य वेदोंकी उत्पत्ति हूई. भरतने ब्राह्मणों के पढने वास्ते, शुभध्यान, और श्रावक धर्म काव्य वहार चलाने वास्ते बनाए. जब साताजिनों के अंतरोंमे, (श्री सुविधिनाथ पुष्पदंत के निर्वाणसें, श्री धर्मनाथजी के तीर्थ प्रवर्त्तितक,) तिनोंके तीर्थके व्यवच्छेद हूये, अर्हन् धर्मभी व्यवच्छेद हूआ; तबातिन ब्राह्मणा भासोंने मिथ्या वेद बनाके प्रवर्त्ता ए. और अपनी पूजा भक्ति करवाइ. असंजतिहो के जगत् में पूजवाए. यह असंजति पूजा नामा आश्चर्य उत्पन्न हूआ. ईनोंका विशेष वृत्तांत आवश्यक सूत्रादि शास्त्रों में है.

(११)

श्रीश्रेयांसनाथ अरिहंत, तिनके ७६, गणधर, और ७६, गच्छ. आवश्यकादौ.

(१२)

श्री वासुपूज्य अरिहंत, तिनके ६६, गणधर, और, ६६, गच्छ. आवश्यकादौ.

(१३)

श्री विमलनाथ अरिहंत, तिनके ५७, गणधर, और, ५७ गच्छ आवश्यकादौ.

(१४)

श्री अनंतनाथ अरिहंत, तिनके ५०, गणधर, और ५० गच्छ. आवश्यकादौ.

(१५)

श्री धर्मनाथ अरिहंत, तिनके ४३, गणधर और, ४३, गच्छ. आवश्यकादौ.

(१६)

श्री शांतिनाथ अरिहंत, तिनके ३६, गणधर, और, ३६, गच्छ. आवश्यकादौ.

(१७)

श्री कुंथुनाथ अरिहंत, तिनके ३५, गणधर, और, ३५, गच्छ. आवश्यकादौ.

(१८)

श्री अरनाथ अरिहंत, तिनके ३३, गणधर, और, ३३, गच्छ. आवश्यकादौ.

(१९)

श्री मल्लिनाथ अरिहंत, तिनके २०, गणधर, और, २०, गच्छ. आवश्यकादौ.

(२०)

श्री मुनिसुव्रत स्वामी अरिहंत, तिनके १८, ग-

णधर, और, १८ गच्छ.

अ—लंकाका राजा रावण, जब दिग्विजय करनेके वास्ते देशोंमें चतुरंग दललेकर, राजाओंको अपणी आज्ञा मना रहाथा; इस अवसरमें, नारद मुनि, लाठी सोटे, और, लात, घूसयोंका पीटा हूआ, पुकार करता हूआ, रावण के पास आया; तब रावणनें नारदकों पूछाकि, तुजकों किसने पीटा है? तब नारदने कहाकि, राजपुर नगरमें मरूत नामा राजा है, सो मिथ्या दृष्टि है. वो ब्राह्मणा भासोंके उपदेशसें यज्ञ करने लगा. होम के वास्ते, सौ निकोंकीतरे, वे ब्राह्मणा भास, अरराट शब्द करते हूअे, औसें बिचारे पशुओंकों यज्ञमें मारते हूअे, मैनें देखे, तब मैंनें आकाशसें उतरके जहां मरूत राजा ब्राह्मणों के साथमें बैठाथा, तहां आकर मरूत राजाकों कहाकि, यह तुम क्या करने लग रहे हो? तब मरुत राजाने कहा; ब्राह्मणोंके उपदेशसें देवताओंकी तृप्ति वास्ते, और स्वर्ग वास्ते, यह यज्ञ, मैं, पशुओंके बलिदानसें करताहूं. यह महा धर्म है. (नारद रावणसें कहता है.) तब मैंनें, मरुत राजाकों कहाकि, हे राजन्? जो वेदोंमें यज्ञ करना कहा है, वो यज्ञ मैं तुमकों सुनातहूं.

" आत्मा तो यज्ञका यष्टा अर्थात् करने वाला है तथा तपरूप अग्नि है, ज्ञानरूप घृत है, कर्मरूप इंधन है, क्रोध, मान, माया, और लोभादि पशु है, सत्य बोलने रूप यूप अर्थात् यज्ञस्तंभ है, तथा सर्व जीवोंकी रक्षा करणी यह दक्षिणा है, ज्ञान, दर्शन, चारित्र यह रत्नत्रयी रूप त्रिवेदी है. यह यज्ञ वेदका कहा हूआ है. ऐसा यज्ञ जो योगाभ्यास संयुक्त करे, वो करने वाला मुक्तरूप हो जाता है. और जो राक्षस तुल्य होके छागादि मार के यज्ञ करता है, सो मरके घोर नरकमें चिरकाल तक महादुःख भोगता है. हे राजन्! तुं उत्तम वंशमें उत्पन्न हूआ है, बुद्धिमान् है, इस वास्ते इस व्याधोचित पापसे निवर्त्तन होजा. जेकर प्राणीवधसेंही जीवोंकों स्वर्ग मिलता होवे, तब तो थोडेही दिनोमें यह जीवलोक खाली हो जावेगा यह मेरा वचन सुनके यज्ञकी अग्निकीतरें प्रचंड हूए होये ब्राह्मण हाथमें लाठी, सोटे लेकर सर्व मेरेकों पीटने लगे, तब जैसें कोइ पुरुष नदीके पूरसें डरकर दीपेमें चला आता है, तैसें मैं दौडता हूआ तेरे पास पहुंचा हूं. हे रावण, हे राजन् बिचारे ! निरपराधी पशु मारे जाते है, तुं तिनकी रक्षा करणे में तत्पर

हो. जैसें मैं तेरे शरणसें बचाहूं, ऐसें तुं पशुओंकों भी बचाव. तब रावण विमानसें उतर के मरुत राजाके पास गया, मरुत राजाने रावणकी बहुत पूजा भक्ति करी, और आदर सन्मान करा. तब रावण कोपमें होकर मरुत राजाको ऐसें कहता हूआ. अरे! तुं नरकका देनेवाला यह यज्ञ क्या कर रहा है? क्योंकि धर्म तो अहिंसा रूप सर्वज्ञ तीर्थंकरोंने कहा है. और सोइ धर्म जगत्के हितका करने वाला है. जब तुमने पशुओंको मारके धर्म समझा, तब तुमकों हितकारक क्योंकर होवेगा? इस वास्ते यह यज्ञ तुमकों दोनों लोकमें अहितकारक है, इसकों छोड दो, नही तो इस यज्ञका फल तुमकों इस लोकमें तो मैं देताहूं, और परलोकमें तुमारा नरकमें वास होवेगा. यह सुनकर मरुत राजाने यज्ञ करना छोड दीया, क्योंकि रावणकी आज्ञा उस वखत ऐसी भयंकरथी, कि कोइ उसकों उल्लंघन नाहि कर सक्ता था.

यह कथन, श्रीआवश्यक सूत्र, आचार दिनकर, त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरितादि ग्रंथोंमें है.

इस पूर्वोक्त कथानकसें यहभी मालुम होजाताहै,

कि जो ब्राह्मण लोक कहते है, कि आगें राक्षस यज्ञ विद्धंस कर देतेथे, सो क्या जाने ? रावणादि जबरदस्त जैन धर्मी राजें पशुवध रूप यज्ञ करणा छुडा देतेथे, तबसेंही ब्राह्मणोंने पुराणादि शास्त्रों में उन जबरदस्त राजाओंकों राक्षसोंके नामसें लिखा है ? तथा यहभी सुननेमें आया है, कि नारदजीनेभी, मायाके वशसें जैनमत धारके वेदोंकी निंदा करीथी. तो क्या जाने ? इस पूर्वोक्त कथानकका यही तात्पर्य्य लोकोंने लिख लीया हो ?

व–रावणनें नारदकों पूछाकि, असा पापकारी पशु वधात्मक यह यज्ञ कहांसें चला है, तब नारदजीनें कहाकि–शुक्तिमती नदी के किनारे उपर अेक शुक्ति मती नगरी है. तिसमें हरिवंशीय श्रीमुनिसुव्रत स्वामी तीर्थंकरकी औलादमें जब कितनेक राजे व्यतीत हो गये, तब अभिचंद्र नामा राजा हूआ. तिस अभिचंद्र राजाका वसुनामा बेटा हूआ. वो वसु महा बुद्धिमान्, सत्यवादी, लोकोंमें प्रसिद्ध हूआ. उसी नगरीमें अेक क्षीरकदंबक नामा उपाध्याय रहताथा. तिसके पर्वतनामा पुत्र था. उस क्षीरकदंबक उपाध्यायके पास राजाका बेटा वसु, (१) उपाध्यायका

बेटा पर्वत, (२) औरमैं (नारद) हमतीनो पढतेथे; अेकदा समय, हमतो तीनो जन पाठकरने के श्रमसें रात्रिकों सो गयेथे, और उपाध्याय जागताथा. हम छत उपर सूतेथे. तब दो चारण साधु ज्ञानवान् आकाशमें परससपर वार्ता करते चले जातेथे, कि यह क्षीरकदंबक उपाध्याय के तीन छात्रोंमेंसुं दो नरकमें जावेंगें, और एक स्वर्गमे जावेगा. यह मुनियोंका कहना सुनकरके उपाध्याय चिंता करने लगा, कि जब मेरे पढाये हूये नरकमें जायेंगे तब यह मुजकों बहुत दुःख है, परंतु इन तीनोंमेंसुं नरक कौन जायेंगे? और स्वर्ग कौन जायगा? इस बातके जानने वास्ते तीनोंकों एक साथ बुलाये. पीछे गुरुने हम तीनोंकों एकैक पीठिका कुक्कड दीया, और कहदीयाकि इनकों ऐसी जगेमें मारो जहां कोइभी न देखता होवे? पीछे वसु और पर्वत यह दोनों शून्य जगाओंमे जाकर दोनों पीठिके बनाये कुक्कडोंकों मार ल्याये, और मैं (नारद) उस पीठिके कुक्कडकों लेकर बहुत दूर नगरसें बाहिर चला गया. जहां कोइभी नहीथा, तहां जाकर खडा हूआ, चारों ओर देखने लगा, और मनमें यह तर्क उत्पन्न हूआ, कि

गुरु महाराजने तो यह आज्ञा कीनीहैं, कि हे वत्स! यह कुक्कड, तूं तहां मारी, जहां कोइ देखता न होवे, तो यह कुक्कड देखता है, और मेंभी देखता हूं. खेचर देखते है, लोकपाल देखते है, ज्ञानी देखतें है, ऐसा तो जगत्में कोइभी स्थान नही जहां कोइभी देखता न होवे. इस वास्ते गुरुके कहनेका यही तात्पर्य्य है, कि इस कुक्कडका वध नही करना. क्योंकि गुरु पूज्य तो सदा दयावान्, और हिंसासें पराङ्मुख है. निः केवल हमारी परीक्षा लेने वास्ते यह आदेश दीयाहै. ऐसा विचार करके विनाही मारे कुक्कडकों लेके मैं (नारद) गुरुके पास चला आया, और कुक्कुडके न मारनेका सबब सर्व गुरुकों कहदीया, तब गुरुने मनं में निश्चय करलीयाकि, यह नारद, ऐसे विवेकवालाहै, सो स्वर्ग जायगा. तब गुरुजीने मुजकों छातीसें लगाया, और बहुत साधुकार कहा. तथा वसु और पर्वतभी मेरेसें पीछे गुरुके पास आये, और गुरुकों कहते हूये, कि हम कुक्कडकों ऐसी जगे मारकें आयेहैं कि जहां कोइभी देखता नहीथा. तब गुरुने कहा तुमतो देखतेथे, तथा खेचर देखतेथे, तबहे पापिष्ठो! तुमने कुक्कड कयों मारे? ऐसे कहकर गुरु-

ने शोचाकि, पर्वत, और वसुके पढानेकी मेहनत, मैनें व्यर्थही करी. मैं क्या करुं? पानी, जैसे पात्रमें जाताहै, वैसाहीबन्न जाताहै. विद्याकाभी यही स्वभावहै. जबप्राणोंसे प्यारा पर्वत पुत्र, और पुत्रसें प्यारा वसु, यह दोनों नरकमें जायगें, तो मुजे फेर घरमें रहकर क्या करणा हैं? ऐसें निर्वेदसें क्षीर कदंबक उपाध्यायने दीक्षा ग्रहण करी, और साधु हो गया. तिसके पद ऊपर पर्वत बैठा, क्योंकि व्याख्या करणे में पर्वत बडा विचक्षणथा. और मैं (नारद) गुरुके प्रसादसें सर्व शास्त्रोंमें पंडित होकर, अपणे स्थानमें चला आया. तथा अभिचंद्र राजाने राज्य छोडकर संयम लीया, और वसुराजा राज्य सिंहासन ऊपर बैठा. वसुराजा जगतमें सत्यवादी प्रसिद्ध हो गया, अर्थात् वसुराजा जूठ नही बोलता है, ऐसा प्रसिद्ध हो गया. वसुराजानेभी, अपणी प्रसिद्धि कों कायम रखने वास्ते, सत्यही बोलना अंगीकार कीया, वसुराजाकों एक स्फाटिकका सिंहासन गुप्तपणे ऐसा मिलाकि—सूर्य के चांदणे में जब वसुराजा उसके ऊपर बैठताथा, तब सिंहासन लोकोंकों बिलकुल नही दीख पडताथा; तब लोकोंमें यह प-

सिद्धि हो गइकि सत्यके प्रभावसें वसुराजाका सिंहासन देवता आकाशमें थांभे रखते है. तब सब राजा डरके वसुराजाकी आज्ञा मानने लग गये, क्योंकि चाहो सच्ची हो, चाहो जूठी हो, तोभी प्रसिद्धि जो है, सो पुरुषों कों जयकारिणी होती है.

एकदा प्रस्तावे, मैं (नारद) शुक्तिमती नगरीमें गया, उहां जाकर पर्वतकों देखातो, वो, अपणे शिष्योंकों वेद पढा रहा है, और उसकी व्याख्या करता है तब वेदमें एक ऐसीश्रुति आइ. "अजैर्यष्टव्यमिति" पर्वतने इसश्रुतिकी ऐसी व्याख्या करी, जो 'अजा' नाम छागका (बकरीका) है तिनोंसें यज्ञ करना, अर्थात् तिनकों मारके तिनके मांसका होम करना. तब मैनें (नारदनें) पर्वतकों कहाकि हे भ्रातर! यह व्याख्या तुं क्या भ्रांतिसें करताहै? क्यों कि, गुरु श्री क्षीर कदंबकने इसश्रुतिकी ऐसी व्याख्या नही करी है; गुरुजीने तो, तीन वर्षका-धान्य पुराणे जौंका ऐसा अर्थ, यह श्रुतिका करा है. "नजायंतइत्यजाः" जो बोनेसें न उत्पन्न होवे, सो अजा, ऐसा अर्थ श्री गुरुजीने तुमकों, और हमकों शिखलायाथा; वो अर्थ तुमने किस हेतुसें भूला

दीया? तब पर्वतने कहाकि, तुमने जो अर्थ करा है, सो अर्थ गुरुजीनें नही कहाथा, किंतु जो अर्थ मैनें करा है, सो अर्थ गुरुजीने कहाथा. तथा निघंटुमें भी, अजा नाम बकरीका ही लिखाहै. तब मैनें (नारदनें) पर्वतकों कहाकि, शब्दोंका अर्थ दो तरेंका होता है, एक मुख्यार्थ, और दूसरा गौणार्थ. यहां श्री गुरुने गौणार्थ कराथा. गुरु धर्मोपदेष्टाका वचन, और यथार्थ श्रुतिका अर्थ, दोनोंकों अन्यथा कर के हे मित्र? तुं महा पाप उपार्जन मत कर. तब फेर पर्वतने कहाकि अजा शब्दका अर्थ श्री गुरुजीने मेषका करा है, निघंटुमेंभी ऐसेही अर्थ है, इनकों उल्लंघन करके तुं अधर्म उपार्जन करता है, इस वास्ते वसुराजा आपणा सहाध्यायी है, तिसकों मध्यस्थ करके इस अर्थका निर्णय करो, और जो जूठा होवे, तिसकी जीव्हा छेद करणी, ऐसी प्रतिज्ञा करी. तब मैनेंभी पर्वतका कहना मान लीया, क्योंकि सांचकों क्या आंच है? तब पर्वतकी माताने पर्वतकों छाना कहाकि हे पुत्र! तुं ऐसा जूठा कदाग्रह मत कर. क्योंकि मैनेंभी इस श्रुतिका अर्थ तेरे पितासें तीन वर्षका धान्यही सुनाहै. इस वास्ते तैंने

जो जीव्हा च्छेदकी प्रतिज्ञा करी है, सो अच्छी नही करी, क्योंकि जो विना विचारें काम करता है, वो अवश्य आपदा में पडता है. तब पर्वत कहने लगाकि हे मातः! जो मैंनें प्रतिज्ञा करी है, वो अब मैं किसी तरेंसेंभी दूर नही कर सक्ताहूं. तब माता अपने पर्वत पुत्रके दुःखकी पीडी हुइ दुःखिनी होकर वसुराजाके पास पहुंची, क्योंकि पुत्रके जीवितव्य वास्ते कौन ऐसी है, जो उपाय न करे? जब वसुराजाने अपने गुरुकी पत्नीकों आती देखी तब सिंहासनसें उठके खडा हूआ, और कहने लगाकि, मैनें आज क्षीर कदंबकका दर्शन करा जो माता तुजकों देखी. अब हे मातः? कहो (आज्ञा करो) मैं क्या करुं? और क्या देऊं? तब ब्राह्मणी कहने लगीकि, तूं मुजे पुत्रकी भिक्षा दे; क्योंकि, विना पुत्रके मैंने हे पुत्र! धन धान्य क्या करणा है? तब वसुराजा कहने लगा हे मातः! मेरेकों तो पर्वत पूजने और पालने योग्य है, क्योंकि, गुरूकीतरें गुरूकें पुत्रकी साथ भीवर्त्तना चाहिये, यह श्रुतिका वाक्य है, तो फेर आज किसकों कालने क्रोधमें आकर पत्र भेजा है, जो मेरे भाइ पर्वतकों मारा चाहता है?

इस वास्ते हे मातः ! तुं मुझे सर्व वृत्तांत कहदे. तब ब्राह्मणीने अपणे पुत्रका अज व्याख्यान, और जीव्हा च्छेदकी प्रतिज्ञा कह सुनाई, और कहाकि, जो तैनें अपने भाइकी रक्षा करनीहो ? तो अजा शब्दका अर्थ मेष अर्थात् बकरी बकरा करना. क्योंकि, महात्मा जन परोपकारके वास्ते अपने प्राणभी दे देते हैं, तो वचनसें परोपकार करनेमें तो क्याही कहना है ? तब वसुराजाने कहाकि, हे मातः ! मैं मिथ्या वचन, क्योंकर बोलुं ? क्योंकि, सत्य बोलने वाले पुरुष, जे कर अपणे प्राणभी जातें देखे, तोभी असत्य नही बोलते है तो फेर गुरुका वचन अन्यथा करणा, और जूठी साक्षी देणी, इसका तो क्याही कहणा है? तब ब्राह्मणीने कहाकि, या तो गुरुके पुत्रकी जान बचेंगी, या तेरा सत्य व्रतका आग्रहही रहेगा; और मैंभी तुजे अपने प्राणकी हत्या दऊंगी. तब वसुराजाने लाचार होकर ब्राह्मणीका वचन माना. पीछे क्षीरकदंबककी भार्या प्रमुदित होकर अपने घरकों चली गई. इतनेंहीमें मैं, (नारद), और पर्वत दोनों जने वसुराजाकी सभामें गये. वहां सभामें बडे बडे विद्वान् एकिठे मिले, और वसुराजा, सभाके विचमें

सभापति होकर स्फाटिकके सिंहासन ऊपर बैठा. तब पर्वतनें और मैनें (नारदने) अपनी अपनी व्याख्याका पक्ष सुणाया, और असाभी कहाकि, हे राजन्! तूं सत्य कहदेकि, गुरुजीनें इन दोनों अर्थों मेंसुं कौनसा अर्थ कहाथा? तब वृद्ध ब्राह्मणोंने कहाकि, हे राजन्! तूं सत्य सत्य जो होवे, सो कहदे. क्योंकि, सत्यसेंही मेघ वर्षता है. सत्यसेंही देवता सिद्ध होते है. सत्यके प्रभावसेंही यह लोक खडा है. और तुं पृथिवीमें सत्यवादी सूर्यकी तरें प्रकाशक है, इस वास्ते सत्यही कहना तुमकों उचित है. और इससें अधिक हम क्या कहे? यह वचन सुनकरभी वसुराजाने अपने सत्य बोलनेकी प्रतिज्ञाकों जलांजलि देकर "अजान् मेषान् गुरुर्व्याख्य दिति" अर्थात् अजाका अर्थ गुरूने मेष (बकरे) कहेथे. ऐसी साक्षी वसुराजाने कही. तब इस असत्यके प्रभावसें राज्याधिष्ठायक व्यंतर देवतानें वसुराजाके सिंहासनकों तोडके, वसुराजाकों पृथिवी के ऊपर पटकके मारा. तब वसुराजा मरके सप्तमी नरकमें गया.

"वसुराजाके पीछे राज्य सिंहासन ऊपर वसुराजाके आठ पुत्र, पृथुवसु, (१) चित्रवसु, (२) वासन,

(३) शक्त, (४) विभावसु, (५) विश्वावसु, (६) सूर, (७) महासूर, (८) अनुक्रमसें गद्दी ऊपर बैठे. तिन आठोंहीकों व्यंतर देवताओंने मार दीये. तब सुवसुनामा नवमा पुत्र, तहांसे भागकर नागपुरमें चला गया. और दशमा बृहध्ध्वज नामा पुत्र, भागकर मथुरांमें चला गया, और मथुरामें राज्य करने लगा. ईस बृहध्ध्वजकी संतानोमें यदुनामा राजा वहु प्रसिद्ध हूआ. ईस वास्ते हरिवंशका नाम छूट गया, और यदुवंश प्रसिद्ध हो गया.

यदुराजाके सूर नामक पुत्र हूआ, तिस सूर राजाके दो पूत्र हूए. शौरी, (१) और सुवीर, (२) शौरीपीता के पीछे राजा बना. शौरीने मथुरांका राज्य अपने छोटे भाइ सुवीरकों दे दीया, और आप कुशावर्त्त देशमें जाकर अपने नामका शौरीपुर नगर वसाके राजधानी बनाइ.

शौरीके अंधकविष्ण आदि पुत्र हूए. अंधकविष्णके दश वेटे हूअे. समुद्रविजय, (१) अक्षोभ्य. (२) स्तिमित, (३) सागर, (४) हीमवान्, (५) अचल, (६) धरण, (७) पूर्ण, [८] अभिचंद्र, [९] और वसुदेव. [१०] समुद्रविजयके वेटे अरिष्टनेमि. जैनम-

तके, २२, बावीसमें तीर्थंकर हूअे. औरभी समुद्रवि-
जयजीके दृढनेमि, रथनेमि, आदि बेटेथे.

वसुदेवजीके बेटे बडे प्रतापी कृष्ण वासुदेव, और
बलभद्रजी हूअे. सुवीरनामा जो सूर राजाका दूसरा
पुत्र था, उसका बेटा भोजवृष्णि हूआ. भोजवृष्णिका
उग्रसेन, और उग्रसेनका बेटा कंस हूआ.

वसुराजाका नवमा पुत्र सुवसु, जो भागके ना-
गपुर गयाथा, तिसका पुत्र बृहद्रथनामा हूआ, ति-
सने राजगृहमें आकर राज्य करा. तिसका बेटा ज-
रासिंध हूआ." यहप्रसंगसे लिखदीया है.

तब नगरके लोक, और पंडितोनें पर्वतका बहुत
उपहास करा, और पर्वतको कहा, कि तूं जूठा है, क्योंकि
तेरे साक्षी वसुकों जूठा जानकर देवताने मारदीया,
इस वास्ते तेरेसें अधिक पापी कौनहे ? औसें कहकर
लोकोंने मिलकर पर्वतकों नगरसे बाहिर निकाल
दीया. तब महाकाल असूर, उस पर्वतका सहायक
हूआ. रावणने नारदकों पुछाकि, वो महाकाल अ-
सुर कौनथा ? तब नारदने कहा कि, यहां चरणायु-
गल नामा नगर है, तिसमें अयोधन नामा राजा
था. तिसकी दिती नामा भार्या थी. तिसकी सुलसा

नामक वहुत रूपवती बेटी थी. तिस सुलासाका स्वयंवर, उसके पिता अयोधन नामा राजाने करा. उहां और सर्व राजे बुलवाये. तिन सर्व राजा ओमेंसे सगर राजा अधिक था. तिस सगर राजाकी मंदोदरी नामा रणवासकी दरवाजेदार सगरकी आज्ञासें प्रतिदिन अयोधन राजाके आवासमें जाती हूई. एक दिन दिति घरके बागके कदली घरमें गई. और सुलसाके साथ मंदोदरीभी तहां आगई. मंदोदरी दिति और सुलसाकी बातां सुननेके वास्ते तहां छिप गइ. दिति सुलसाकों कहने लगी हे बेटी ? मेरे मनमें इस तेरे स्वयंवरमें बडा शल्य है, तिसका उद्धार करना तेरे अधीन है, इस वास्ते तुं मूलसें सुनले.

श्री ऋषभदेव स्वामीके बेटोंमें भरत, और बाहुबली यह दो पुत्र हूअे, तिनमें भरतका पुत्र सूर्ययश, और बाहुबलीका चंद्रयश, जीनोसें सूर्यवंश, और चंद्रवंश चलेहै. चंद्रवंशमें मेरा भाइ तृणबिंदु नामा हूआ, और सूर्यवंशमे तेरा पिता राजा अयोधन हूआ. अयोधन राजाकी बहिन सत्ययशा नामा तृणबिंदुकी भार्या हूइ, तिसका बेटा मधुपिंगलनामामेरा भत्रीजा है. इस वास्ते हे सुंदरी ! मैं तेरेकों तिस मधुपिंगलको

दीइ चाहती हूं. और तूंतो, क्या जाने स्वयंवरमे किसकों देइ जावेगी ? मेरे मनमें यहशल्य है, इस वास्ते तुने स्वयंवरमें सर्व राजाओंकों छोडके मेरे भत्रीजे मधुपिंगलकों वरना. तब सुलसाने माताका कहना स्वीकार करलीया. और मंदोदरीने यह सर्व वृत्तांत सुनकर सगर राजाकों कहदीया. तब सगर राजाने अपने विश्वभूति नामा पुरोहितकों आदेश दीया. वो विश्वभूति, बडा कवि था. उसने तत्काल राजाके लक्षणोंकी संहिता बनाइ. तिस संहितामें ओसें लिखाकि जीससें सगर तो शुभ लक्षणोवाला बनजावे, और मधुपिंगल, लक्षणहीन सिद्ध हो जावे. तिस पुस्तककों संदूकमें बंध करके रख छोडा. जब सब राजा आकर स्वयंवरमें ओकिठे हूओ, तब सगर की आज्ञासें विश्वभूतिने वो पुस्तक काढा. और सगरने कहाकि जो लक्षणहिन होवे, तिसकों यातो मारदेना, या स्वयंवरसे बाहिर निकाल देना. यह कहना सबीने मानलीया. तब पुरोहित, यथा यथा पुस्तक वांचता गया, तथा तथा मधुपिंगल, अपनेकों अपलक्षणवाला मानकर लज्जावान् होता गया, और अंतमे स्वयंवरसें आपहि निकल गया. तब सुलसा-

ने सगरको वरलीया. और सर्व राजे अपने अपने स्थानोंमें चले गये. और मधुपिंगल, उस अपमानसें बाल तप करके साठहजार (६०००) वर्षकी आयुवाला महाकाल नामा असूर, परमाधार्मिक, देव हूआ. तब अवधि ज्ञानसें सगरका कपट, जो उसने सुलसाके स्वयंवरमें जूठा पुस्तक बनाया था, और अपना जो अपमान हूआथा, सोदेखा और जाना तब विचार कराकि, सगर राजादिकों को मैं मारुं तब-तिनों के छिद्र देखने लगा. जब शुक्तिमती नगरीके पास पर्वतकों देखा, तब ब्राह्मणका रूप करके पर्वतकों कहने लगाकि, हे पर्वत ? मैं तेरे पिताका मित्रहूं. मेरा नाम शांडिल्य है. मैं, और तेरा पिता, हम दोनो साथ होकर गौतम उपाध्यायके पास पढेथे. मैंनें सुनाहै, कि नारदने, और दूसरे लोकोंने तुजे बहुत दुःखी करा. अब मैं तेरा पक्ष पूर्ण करुंगा, और मंत्रों करके लोकोंकों विमोहित करुंगा, यह कहकर पर्वतके साथ मिलकर लोकोंकों नरकमें डालने वास्ते तिस असुरने बहुत व्यामोह करे. व्याधि, भूतादि दोष, लोकोंकों करदीये. पीछे उहां जो लोक पर्वतका वचन मानलेतेथे, उनोंकों अच्छा करदेताथा. शां-

डिल्यकी आज्ञासे पर्वतभी, लोकोंको अच्छा करने लगा. इस तरेंसें उपकार करके लोकोंको अपने मतमें मिलाता जाताथा. तब तिस असुरने सगर राजाकों, तथा तिसकी राणीयोंकों बहुत भारी रोगादिकका उपद्रव करा, तबतो राजाभी पर्वतका सेवक बना. पर्वतने शांडिल्यके साथ मिलकर तिसका रोग शांत करा, और पर्वतने राजाकों उपदेश कराकि, हे राजन्! सौत्रामणिनामा यज्ञ करके मद्यपान, अर्थात् शराब पीनेमें दोष नहीं है. तथा गोसवनामा यज्ञमें अगम्य स्त्री चांडाली आदि तथा माता, बहिन, बेटी आदिसें विषय सेवन करना चाहिये.

मातृ मेधसें माताका, और पितृमेधमें पिताका, वध, अंतर्वेदी कुरुक्षेत्रादिकमें करे तो दोष नही. तथा कच्छुकी पीठ ऊपर अग्नि स्थापन करके तर्पण करे, कदाचित् कच्छु न मिले तो, शुद्ध ब्राह्मणके मस्तककी टटरी ऊपर अग्नि स्थापन करके होम करे, क्योंकि, टटरीभी कच्छुकी तरें होतीहै. तथा इस बातमें हिंसा नहीं है. क्योंकि वेदोंमें लिखाहै. "सर्ववै पुरुषे वेदं यद्भूतं यद्भविष्यति ईशानोयं मृतत्वस्य यदन्नेना तिरोहति" इसका भावार्थ यहहै कि, जो कुछ है,

सो सर्व ब्रह्मरूपही है. जब एकही ब्रह्म हूआ, तब कौन किसीकों मारता है? इस वास्ते यथा रुचिसें यज्ञोंमें जीव हिंसा करो, और तिन जीवोंका मांस भक्षण करो. इसमें कुछ दोष नही है. क्योंकि, देवो देश करनेसें मांस पवित्र होजाताहै. इत्यादि उपदेश देकर, सगरराजाकों अपने मतमें स्थापन करके, अंतर्वेदी कुरुक्षेत्रादिमें, वो पर्वत, यज्ञ कराता हूआ. तब महाकाल असुर अवसरपाके, राजसूयादिक यज्ञभी कराता हूआ, और जो जीव यज्ञमें मारे जाते थे, तिनकों विमानमे बैठाके, देवमायासें देखाता हूआ. तब लोकोंकोंभी प्रतीत आ गइ. पीछे वो निःशंक होकर जीव हिंसा रूप यज्ञ करने लगे, और पर्वतका मत मानने लगे, सगर राजाभी, यज्ञ करनेसें बडा तत्पर हूआ. सुलसा, और सगर, दोनों मरके नरकमें गये, तब महाकालासुरने सगर राजा कों मार पीटादिक महादुःख देके अपणा वैर लीया. इसवास्ते हे रावण! पर्वत पापीसें यहजीवहिंसा रूप यज्ञ विशेषकरके प्रवर्त्त हूए है. इत्यादिक वृत्तांत श्री आवश्यक सूत्र, श्री हेमचंद्राचार्य विरचित त्रिषष्टिशलाका पुरुष चरित, आचार दिनकरादि ग्रंथोमें विस्तार पूर्वक है.

(२१)

श्री नमिनाथ अरिहंत, तिनके १७, गणधर, और, १७, गच्छ. आवश्यकादौ.

(२२)

श्री अरिष्टनेमि अरिहंत, तिनके ११, गणधर, और, ११, गच्छ. आवश्यकादौ.

अ—इन तीर्थंकरके समयमें बारांवर्षीय दुर्भिक्ष काल पडाथा, यह कथन श्री महानिशीथ सूत्रमें है. तिस समय गौतम ऋषि, मगधदेशमें रहताथा. तिसदेश में वेदांत माननें वाले लोक, गौतमके पास रहने लगे, तब परस्पर गौतमके परिवार वाले, और वेदांत मानने वाले ब्राह्मणोंकी, ईर्षा उत्पन्न हुई. तब गौतमके परिवार वाले गौतमसें कहने लगेकि, यह वेदांत माननें वाले, अपने मनमें वेदांतका बहुत घमंड रखते है, और हमारी बहुत निंदा करते है. तब गौतमनें वेदांत खंडन करने वास्ते, न्याय सूत्र रचे, और तिनसें वेदांतका खंडन कीया. यह नैयायिकमत, वेदवेदांतका प्रतिपक्षी है.

ब—व्यासजी, जो कि, कृष्ण द्वपायन नामकेसे प-

सिद्ध है. तिसनें सर्व ब्राह्मणोंसें सर्व श्रुतिओं एकठ्ठी करके, तिनके चार भाग बनाये. तिनमें प्रथम भाग का नाम "ऋग्वेद" रख्खा, और अपने पैलनामा शिष्यकों दीना. दूसरे भागका नाम "यजुर्वेद", रख्खा, और अपने वैश्यंपायननामा शिष्यकों दीना. तीसरे भागका नाम "सामवेद", रख्खा, सो अपने जैमनिनामा शिष्यकों दीना. और चौथे भागका नाम "अथर्ववेद", रख्खा सो अपने समंतुनामा शिष्यकों दीना. यहांसें ऋग्वेदादिचारों वेद प्रचलित हूए. यह कथन यजुर्वेद भाष्यानुसार प्रायःहै॥ व्यासजीने ब्रह्मसूत्र रचे, तिनसें वेदांत मतका मूख्य आचार्य व्यासजी हूआ. "यह वेदांत मत हमारी कल्पना मुजिब, जैन, और सांख्य मतकी छायासें, तथा जैन मतकी प्रबलतामें बनाया सिद्ध होता है. क्यों कि, तिनमें (वेदांतमें) वेदोक्त हिंसक यज्ञकी निंदा लिखी है. तथा लोकोंमें जो यह कहावत चलतीहै, कि जैन मत थोडेही दिनोंसें प्रचलित हूआ है, सोभी लोकोंकी कहावत इसवेद व्यासके बनाये ब्रह्मसूत्रसें जूठी हो गइ है. क्यों कि, वेद व्यासने अपने रचे ब्रह्मसूत्र के दूसरे अध्याय के दूसरे पादके तेतीसमे

३३, सूत्रमें जैनमतकी स्याद्वाद सप्तभंगीका खंडन लिखाहै, सो सूत्र यहहै. "नैकस्मिन्नसंभवात्" ॥३३॥ इस लेखसें सिद्ध होताहै, कि जैनमत वेदव्याससें भी प्रथम था. जे कर नहोता तो, वेदव्यास अपने रचे सूत्रोमें खंडन किसका करते?" *

व्यासजिका जैमनि नामा शिष्य, मीमांसक शास्त्रका कर्त्ता, मीमांसक मतका मुख्य आचार्य गिना जाता है. शेष उपनिषदों, और वेदांग, अन्य अन्य ऋषियोंनें पीछेसें बनाये है.

तथा व्यासजिका शिष्य वैश्यंपायन, तिसका शिष्य याज्ञवल्क्य, तिसकी अपने गुरु वैश्यंपायनसें, तथा अन्य ऋषियोंसें लडाइ हूइ, तब याज्ञवल्क्यने यजुर्वेद वमन करा, अर्थात् त्यागदीना, और किसी सूर्यनामा ऋषिसें मिलके नवीन यजुर्वेद रचा, तिसका नाम शुक्ल यजुर्वेद रख्खा. याज्ञवल्क्यके पक्षमें बहुत ब्राह्मण हो गये, तिनोंने मिलके पहिले यजुर्वेदका नाम "कृष्ण यजुर्वेद" अर्थात् अंधकाररूप यजुर्वेद रख्खा, और तिसकों सापित वेद

---

* वेदव्यासके करे खंडनका खंडन, और सप्तभंगीका स्वरूप तथा युक्तिद्वारा मंडन, तत्त्वनिर्णय प्रासादमे है.

ठहराया. पीछे याज्ञवल्क्यसें, और सुलसासें पीप्पलाद पुत्र उत्पन्न हूआ; तिनका वृत्तांत जैन मतके ग्रंथोमें ऐसा लिखा है.–काशपुरीमें दो संन्यासणीयां रहती थी, तिसमें एकका नाम सुलसा था, और दूसरीका नाम सुभद्रा था. येह दोनोंही, वेद वेदांगोकी जानकारथी. तिन दोनों बहिनोंने बहुत वादीयोंको वादमें जीते. इस अवसरमें याज्ञवल्क्य परिव्राजक, तिनके साथ वाद करनेकों आया. और आपसमें ऐसी प्रतिज्ञा करी कि, जो हारजावे, वो जीतने वालेकी सेवा करे. तब याज्ञवल्क्यनें वादमें सुलसाकों जीतके अपणी सेवा करनेवाली बनाइ. सुलसाभी रातदिन याज्ञवल्क्यकी सेवा करणे लगी. याज्ञवल्क्य, और सुलसा, यह दोनों यौवनवंत (तरुण) थे, इस वास्ते दोनोंही कामातुर होके भोगविलास करने लगगये. दोनों काम क्रिडामें मग्न होकर काशपुरीके निकट कुटीमें वास करते थे. तब याज्ञवल्क्य, और सुलसासें पुत्र उत्पन्न हूआ. पीछे लोकोंके उपहासके भयसें उस लडकेकों पीपलके वृक्षके हेट छोडकर दोनों नठके कहीं चले गये. यह वृत्तांत सुभद्रा; जो सुलसाकी बहिन थी, उसने सुणा.

तब तिस बालकके पास आइ. जब बालककों देखा तो, वो बालक, पिप्पलका फल स्वयमेव मुखमें पडे कोंचबोल रहाहै, तब तिसका नाम भी 'पिप्पलाद' रक्खा, और अपणे स्थानमें लेजाके यत्नसें पाला, और वेदादि शास्त्र पढाये. पिप्पलाद बडा बुद्धिमान् हूआ. तिसनें बहुत वादीयोंका अभिमान, वादमें हराके दूर करा. तब याज्ञवल्क्य, और सुलसा, पिप्पलादके साथ वाद करनेकों आया. पिप्पलादनें दोनोंकों वादमें जीत लीये, और सुभद्रा मासीके कहनेसें जाना कि, यह दोनों मेरे मातापिता है, और मुजे जन्मतेकों निर्दय होकर छोड गयेथे. जब पिप्पलाद, बहुत क्रोधमें आया, तब याज्ञवल्क्य, और सुलसाके आगे मातृमेध पितृमेध यज्ञोंकों युक्तिसें श्रुतियोंद्वारा स्थापन करके, पितृमेधमें याज्ञवल्क्यकों, और मातृमेधमें सुलसाकों मारके होम करा. यह पिप्पलाद मीमांसक मतकी प्रसिद्धि करनेमें मूख्य आचार्य हूआ. इसका वातली नामा शिष्य हूआ. इस तरेसें दिनप्रतिदिन हिंसक यज्ञ बढते गये. जबसें जैन, और बौद्धादिकोंका जोर बढा, तबसें मंद हो गये. यह वृत्तांत महीधर कृत यजुर्वेद भाष्यमें, आव-

श्यक सूत्र, त्रिषष्टिशलाका पुरुष चरितादि ग्रंथोमें है.

तथा इस वर्त्तमान कालमें जो चारों वेद है, तिनकी उत्पत्ति डाक्तर मोक्ष मूलर साहिब, अपने बनाये संस्कृत साहित्य ग्रंथमें ऐसें लिखते है, कि " वेदोंमें दो भाग है. एक छंदो भाग, और दूसरा मंत्र भाग. तिनमें छंदो भागमें इस प्रकारका कथन है, कि जैसें अज्ञानीके मुखसें अकस्मात् वचन निकले हो, और इसकी उत्पति ३१०० इकतीसो वर्षसें हूइ है, और मंत्र भागकों बने हू ए २९०० उनतीसो वर्ष हूए है."

इन वेदों ऊपर अवट, सायण, महीधर, और शंकराचार्यादिकोंने भाष्य, टीका, दीपिका आदि वृत्तिओं रची है, उन भाष्यादिकों कों अयथार्थ जानकर दयानंद सरस्वती स्वामीने अपने कल्पित मतानुसार वेदोक्त हिंसा छुपानेके लिये नवीन भाष्य बनाया है, परंतु पंडित ब्राह्मण लोक दयानंद सरस्वतीके भाष्यकों प्रमाणिक नही मानते है.

(२३)

श्री पार्श्वनाथ स्वामी अरिहंत, तिनके १०, गणधर और, १० गच्छ. आवश्यकादो.

म—श्री पार्श्वनाथजीके बडे गणधर श्री शुभदत्तजी, तिनके पाटपर तिनका शिष्य हरिदत्तजी, तिसके पाटपर आर्य समुद्र, तिसके पाटपर स्वयंप्रभसूरि, तिस स्वयंप्रभसूरिके साधुओंमें एक पिहिता श्रव-नामा साधुथा, तिसका बुद्धकीर्तिनामा शिष्यथा, तिसने बौद्ध मत उत्पन्न करा, तिसकी उत्पत्ति दर्श-नसार नामक ग्रंथमें ऐसें लिखीहै.—

सिरिपासणाहतित्थेसरउतीरेपलासणयरत्थे पिहि-आसवस्ससीहे महालुद्धोबुद्ध कित्तिमुणी॥१॥ तिमि-पूरणासणेया अहिगयपव्वज्जावओपरमभट्ठे रत्तंबरंध-रित्तापवट्टियंतेणएयत्तं॥२॥ मंसस्सनत्थिजीवो जहा-फलेदहियदुद्धसक्कराए तम्हातंमुणित्ता भखंतोणात्थि-पाविट्ठो॥३॥ मज्जंणवज्जणिज्जंदव्वदवं जहजलंत हएदंइतिलोएघोसित्तापव्वत्तियंसंघसावज्जं ॥ ४ ॥ अण्णोकरेदिकम्मंअण्णोतंभुंजदीदिसिद्धंतं परिक-प्पिऊणणूणंवसिकिच्चाणिरयमुववण्णो ॥ ५ ॥

भावार्थः—श्री पार्श्वनाथके तीर्थमें, सरयू नदीके कांठे उपर पलास नामा नगरमें रहा हूआ पिहिता श्रवनामा मूनिका शिष्य, बुद्धकीर्त्तिजीसका नामथा एकदा समय सरयू नदीमें बहुत पानीका पूर चढी

आया. तिस नदीके प्रवाहमें अनेक मरे हूये मच्छ वहते वहते कांठे ऊपर आलगे. तिनकों देखके तिस बुद्धकीर्त्तिने अपने मनमें ऐसा निश्चय करा कि, स्वतः अपनेआप जो जीव मर जावे, तिसके मांस खानेमें क्या पाप है? ऐसा विचार करके, तिसने अंगीकार करी हूइ प्रव्रज्जा व्रतरूप छोडदीनी. अर्थात् पूर्वे अंगीकार करे हूए धर्मसें भ्रष्ट हो कर मांस भक्षण करा. और लोकोंके आगे ऐसा अनुमान कथन करा. मांसमें जीव नही है, इस वास्ते इसके खानेमें पाप नही लगता है. फल, दहि, दूध, मिसरी (साकर) कीतरें. तथा मदीरा पीने में भी पाप नही है, ढीला द्रव्य होनेसें, जलकीतरें. इस तरेंकी प्ररूणा करके तिसने बौद्ध मत चलाया. और यहभी कथन करा. सर्व पदार्थ क्षणिक है, इस वास्ते पाप पुन्यका कर्त्ता, अन्य है, और भोक्ता अन्य है, यह सिद्धांत कथन करा. बुद्ध कीर्त्तिके दो मूख्य शिष्य हूए. मुद्गलायन, (१) और शारीपुत्र, (२) इनोंनें बौद्ध मतकी वृद्धि करी. यह कथन पाश्चात्य बौद्ध आस्री है.

व—श्री पार्श्वनाथजीसें लगाके आज पर्यंत जो पट्टा-

वली, कवलागच्छके नामसें चली आइ है, सो लिखते है.

१ श्री पार्श्वनाथस्वामी	१६ श्री सिद्धसूरि
२ श्री शुभदत्तगणधर	१७ श्री रत्नप्रभसूरि
३ श्री हरिदत्तजी	१८ श्री यक्षदेवसूरि वीरात् ५८५, बारांवर्षीकाल.
४ श्री आर्यसमुद्र	१९ श्री कक्कसूरि
५ श्री स्वयंप्रभसूरि	२० श्री देवगुप्तसूरि
६ श्री केशीस्वामी प्रदेशी नृप प्रतिबोधक	२१ श्री सिद्धसूरि
७ श्री रत्नप्रभसूरि उपकेश वंशस्थापक वीरात् ७० वर्षे	२२ श्री रत्नप्रभसूरि
	२३ श्री यक्षदेवसूरि
	२४ श्री कक्कसूरि
८ श्री यक्षदेवसूरि	२५ श्री देवगुप्तसूरि
९ श्री कक्कसूरि	२६ श्री सिद्धसूरि
१० श्री देवगुप्तसूरि	२७ श्री रत्नप्रभसूरि
११ श्री सिद्धसूरि	२८ श्री यक्षदेवसूरि
१२ श्री रत्नप्रभसूरि	२९ श्री कक्कसूरि
१३ श्री यक्षदेवसूरि	३० श्री देवगुप्तसूरि
१४ श्री कक्कसूरि	३१ श्री सिद्धसूरि
१५ श्री देवगुप्तसूरि	३२ श्री रत्नप्रभसूरि

३३ श्री यक्षदेवसूरि
३४ श्री ककुदाचार्य
३५ श्री देवगुप्तसूरि
३६ श्री सिद्धसूरि
३७ श्री कक्कसूरि
३८ श्री देवगुप्तसूरि
३९ श्री सिध्धसूरि
४० श्री कक्कसूरि
४१ श्री देवगुप्तसूरि विक्रमात् ९९५
४२ श्री सिध्धसूरि
४३ श्री कक्कसूरि पंचप्रमाण ग्रंथ कर्त्ता
४४ श्री देवगुप्तसूरि नवपद प्रकरणकर्त्ता विक्रमात् १०७२
४५ श्री सिध्धसूरि
४६ श्री कक्कसूरि
४७ श्री देवगुप्तसूरि
४८ श्री सिध्धसूरि
४९ श्री कक्कसूरि
५० श्री देवगुप्तसूरि विक्रमात् ११०५
५१ श्री सिध्धसूरि
५२ श्री कक्कसूरि विक्रमात् ११५४ क्रिया हीन साधुकों गच्छ बहार काढे हेमाचार्य के कथनसें.
५३ श्री देवगुप्तसूरि
५४ श्री सिध्धसूरि
५५ श्री कक्कसूरि विक्रमात् १२५२
५६ श्री देवगुप्तसूरि
५७ श्री सिध्धसूरि
५८ श्री कक्कसूरि
५९ श्री देवगुप्तसूरि
६० श्री सिध्धसूरि
६१ श्री कक्कसूरि
६२ श्री देवगुप्तसूरि

६३ श्री सिध्धसूरि
६४ श्री कक्कसूरि
६५ श्री देवगुप्तसूरि
६६ श्री सिध्धसूरि विक्रमात् १३३०
६७ श्री कक्कसूरि गच्छ प्रबंध ग्रंथ कर्त्ता वि १३७१
६८ श्री देवगुप्तसूरि
६९ श्री सिद्धसूरि विक्रमात् १४७५
७० श्री कक्कसूरि वि १४९८
७१ श्री देवगुप्तसूरि वि० १५२८ इस समय लुंपक मत निकला
७२ श्री सिद्धसूरि वि १५६५
७३ श्री कक्कसूरि वि १५९५
७४ श्री देवगुप्तसूरी वि० १६३१
७५ श्री सिध्धसूरि वि १६५५
७६ श्री कक्कसूरि वि १६८९
७७ श्री देवगुप्तसूरि १७२७
७८ श्री सिध्धसूरि १७६७
७९ श्री कक्कसूरि १७८७
८० श्री देवगुप्तसूरि १८०७
८१ श्री सिध्धसूरि १८४७
८२ श्री कक्कसूरि १८९१
८३ श्री देवगुप्तसूरि
८४ श्री सिध्धसूरि

छट्ठे पाट उपर जो केशीस्वामी है, सो आचार्य, श्री महावीर स्वामी अरिहंत, २४, चौवीशमे तीर्थंकरके शासनकी प्रवृत्ति हू आपी छे, श्री वीरके शासनमें गिने जाते है. ईनोंकी प्रवृत्ति क्रिया कलापादि सर्व महावीरजीके शासनके साधुओं सरिषी, परं कहनेमें श्री पार्श्वनाथ संतानीय आते है.

सातमे पाट उपर जो रत्नप्रभसूरि है, सो बडे ही प्रभाविक होये है. इनोंने अपने प्रतिबोधादि द्वारा सवालक्ष १२५०००, जैनी बनाये, और उपकेश [ओसवाल] वंश स्थापन करा. तथा इनोंके प्रतिष्ठित दो मंदिर, श्री महावीर स्वामीके अब तक विद्यमान है. एक तो ओसा नगरीसें, जोकि जोधपुर के पास है, और दूसरा कोरंट नगरमें, जोकि एरणपुरके पास है. यह आचार्य श्री महावीरजीके पीछे ७० वर्षे हूए है.

(२४)

(१) श्री महावीर वर्द्धमान अरिहंत, तिनके ११ गणधर, और, नव ९ गच्छ. आवश्यकादौ. यहांसें जो पाटानुपाट लिखे जावेंगे, सो, श्री महावीरके शासनके होनेसें, इनोंका अंक श्री महावीरजीसें फिराया गया है.

(२५)

(२) श्री सुधर्मा स्वामी पांचमा गणधर, अग्नि वैशायन गोत्री, श्री वीरात् २०, वर्षेमोक्ष.आवश्यकादौ.

(२६)

[३] श्री जंबू स्वामी, श्री वीरात् ६४, वर्षे नि-

र्वाण. आवश्यक परिशिष्ट पर्वन् आदि ग्रंथोमें.

[२७]

(४) श्री प्रभव स्वामी, श्री वीरात् ७५, वर्षे स्वर्ग. परिशिष्ट पर्वन् आदिमें.

(२८)

(५) श्री स्वयंभवसूरि, श्री वीरात् ९८ वर्षे स्वर्ग. इनोंने मनक नामा लघु शिष्यके वास्ते "श्री दशवैकालिक" नामासूत्र पूर्वोमेंसें उद्धार करके बनाया. यह कथन श्री दशवैकालिक, परिशिष्ट पर्वन् आदि ग्रंथोमें है.

(२९)

(६) श्री यशोभद्रसूरि, श्री वीरात् १४८, वर्षे स्वर्ग. परिशिष्ट पर्वन् आदिमें.

(३०)

(७) श्री संभूति विजयसूरि, तथा श्री भद्रबाहुसूरि. श्री भद्रबाहु स्वामी श्री वीरात् १७०, वर्षे स्वर्ग. इनोंने तीन छेद ग्रंथका उद्धार करा, तथा दशनिर्युक्तियां, भद्रबाहुसंहिता, उपसर्ग हरस्तोत्रादि पूर्वोंमेंसें बनाये. आवश्यक सूत्र, परिशिष्ट पर्वन् आदि ग्रंथोंमें यह कथन है.

अ—श्री संभूति विजय सूरिके बारा स्थविर ती... प्रथम नंदनभद्र, (१) स्थविर उपनंद, (२) स्थविर सुमनभद्र... शभद्र, (३) स्थविर यशोभद्र, (४) स्थविर सुमनभद्र, (५) स्थविर गणिभद्र, (६) स्थविर पूर्णभद्र, (७) स्थविर स्थूलभद्र, (८) स्थविर ऋजुमति, (९) स्थविर जंबू, (१०) स्थविर दीर्घभद्र, (११) स्थविर पांडुभद्र, (१२). स्थविर नाम आचार्य पद्धीका है, इस वास्ते स्थविर कहनेसें आचार्य जाणने.

ब—श्री भद्रबाहुस्वामीका प्रथम शिष्य स्थविर गोदास, (१) तिससें गोदास नामा गच्छ निकला, और गोदास गच्छ की चार शाखा हूइ. तामलिप्ति शाखा, (१) कोटिवर्षिका (२) पांडवर्द्धनिका, (३) और दासीखर्पटिका, (४), भद्रबाहुस्वामीका दूसरा शिष्य स्थविर अग्निदत्त, २, तीसरा स्थविर यज्ञदत्त, ३, और चौथा स्थविर सोमदत्त, ४.

(३१)

(८) श्री स्थूलभद्रस्वामी, श्री वीरात् २१५, वर्षे स्वर्ग. इनोंके समयमें प्रथम बारांवर्षी काल पडा. श्री सुधर्म स्वामीसें लेकर श्री स्थूलभद्रस्वामी तक आचार्य स्थविर चौदह १४, पूर्व के पाठ कथे. श्री स्थू-

लभद्र स्वामी पीछे ऊपरले चार पूर्व, प्रथम वज्र ऋ-
षभ संहनन, और प्रथम समचतुरस्र संस्थान, यह
व्यवच्छेद हो गये. इनोंके समयमें नवमें नंदका रा-
ज्य था. और इनोंहीके समयमें पाणिनी सूत्र कर्त्ता
पाणिनी, वार्त्तिकका कर्त्ता वररुचि कात्यायन, और
व्याडी, यहतीनो पंडित ब्राह्मण हूए. पाणिनीने इंद्र,
चांद्र, जैनेंद्र, शाकटायनादि व्याकरणोंकी छाया लेके
पाणिनी सूत्र अष्टाध्यायी रूप रचे. पीछे पतंजलिने
चंद्रगुप्त राजाके राज्यमें पाणिनी सूत्रो परिभाष्य
रचा. यह कथन परिशिष्ट पर्वन्, कौमुदीसरलाटीका,
कथासरित्सागर, आवश्यक सूत्र, और इतिहास ति-
मिर नाशकादिमें है.

(३२)

(९) श्री आर्य महागिरि, और श्री आर्य सुह-
स्ति आचार्य. आर्य महागिरि, श्री वीरात् २४५, वर्षे
स्वर्ग. इनोंका शिष्य बहुल, और बलिस्सह. बलि-
स्सहका शिष्य तत्वार्थ सूत्रादि ५००, ग्रंथ कर्त्ता श्री
उमास्वातिवाचक तिनका शिष्य श्री प्रज्ञापना
(पन्नवणा) सूत्र कर्त्ता श्री श्यामाचार्य.

श्री आर्यसुहस्तिसूरि, श्री वीरात् २९१ वर्षे स्वर्ग

श्री आर्यसुहस्तिके समयमें संप्रति नामा जैन धर्मी राजा हूआ. तिसने सवालक्ष १२५०००, जिन मंदिर बनवाये. जीसमें निनानवे हजार, ९९०००, जीर्ण [पुराने] जिन मंदिरोंका उद्धार करवाया, और छवीश हजार, २६०००, नवीन जिन मंदिर बनवाये. तथा सोने, चांदी, पीत्तल, पाषाण प्रमुखकी सवा कोटि १२५०००००, जिन प्रतिमा बनवाइ. सातसो, ७००, दानशाला बनवाइ. यह कथन परिशिष्ट पर्वन् आदिमें है.

अ--आर्य महागिरिके मूख्य आठ शिष्य तिनोंका नाम.

स्थविर उत्तर, (१) स्थविर बहुल, और बलिस्सह, [२] बलिस्सहसें उत्तर बलिस्सह गच्छ, और तिसगच्छकी चार शाखा हूइ, तिसके नाम. कौशांबिका, १, सुप्तवर्त्तिका, २, कोटंबानी, ३, और चंद्रनागरी, ४. तीसरा स्थविरधनार्द्ध, [३] स्थविर श्री ऋद्धं, [४] स्थविर कौडिन्य, [५] स्थविरनाग, [६] स्थविरनाग मित्र, [७] और स्थविरषद् उलुकरोहगुप्त, [८]. इस रोहगुप्तनें द्रव्य, गुणादि षट् पदार्थ माननेवाला वैशेषिक मत निकाला. यह कथन श्री आवश्यक सूत्र, कल्पसूत्र, उत्तराध्ययनसूत्र. सम्यक्त्व सप्ततिका

आदि ग्रंथों में है.

ब—श्री आर्य सुहस्तिके मुख्य शिष्य, १२, बारां स्थविर हूए. [१] आर्यरोहण स्थविर, तिससें उद्देह गच्छ निकला. उद्देह गच्छकी ४ चार शाखा, और छ, ६, कुल हूए.

"शखाओं के नाम." उदंबरिधिया शाखा, १, मासपूरिका, २, मति पत्रिका, ३, और पन्नपात्तिया.४

"कुलोंके नाम." नागभूत कुल, १, सोमभूत, २, उल्लगच्छ, ३, हस्तालिहं, ४, नंदिज्जम, ५, और परिहास कुल. ६.

[२] स्थविरभद्र यश, तिससें ऋतुवाटिकागच्छ, तिसकी चार शाखा, और तीन कुल.

"शाखाओंके नाम." चंपिज्जियाशाखा, १, भद्दिज्जिया, २, काकंदिया, ३, और मेहलिज्जिया. ४.

"कुलोंके नाम." भद्दजासिय, १, भद्दगुत्तिय, २, यशभद्र. ३.

(३) स्थविरमेघगणि. (४) स्थविर कामर्द्धि, तिससें वेषवाटिका गच्छ, तिसकी चार शाखा, और चार कुल.

"शाखाओंके नाम." सावाथ्थिया शाखा, १, रज्ज

पालिया, २, अंतरिज्जिया, ३, और खेमलिज्जिया.४.

"कुलोंके नाम." गणियं, १, मह्यिं, २, कामड्ढियं, ३, और इंदपुरगं. ४.

(५) स्थविर सुस्थित, और (६) स्थविर सुप्रतिबुद्ध. इन दोनोंसें कोटिक गच्छ निकला. तिसकी चार शाखा, और चार कुल हूअे.

"शाखाओंके नाम." उच्च नागरिशाखा, १, विद्याधरी, २, वयरीय, ३, और मज्झिमिल्ला. ४.

"कुलोंके नाम." बंभलिज्ज, १, वथ्थलिज्ज, २, वाणिज्ज, ३, और पण्ह वाहण. ४.

(७) स्थविर रक्षित. (८) स्थविर रोहगुप्त. (९) स्थविर ऋषिगुप्त, तिससें माणव गच्छ, तिसकी चार शाखा, और तीन कुल.

"शाखाओं के नाम." कासवज्जिया, १, गोयमज्जिया, २, वासिट्ठिया, ३, और सोरट्ठिया, ४.

"कुलोंके नाम." ऋषिगुप्त, १, ऋषिदत्तिक, २, और अभिजयंत. ३.

(१०) स्थविर श्री गुप्त, तिससें चारण गच्छ, तिसकी, ४, चार शाखा, और सत, ७, कुल.

"शाखाओं के नाम." हारीयमा लागारी, १,

संकासिया, २, गवेधुआ, ३, और विज्जनागरी. ४.

"कुलोंके नाम." वच्छलिज्ज, १, पीइधम्मीय, २, हालिज्ज, ३, पुफ्फमित्तिज्ज, ४, मालीज्ज, ५, अज्जवेडीय, ६, और कण्ह सह. ७.

(११) स्थविर ब्रह्मगणि. (१२) स्थविर सोमगणि. कल्पसूत्रादौ.

(३३)

(१०) श्री सुस्थितसूरि, तथा श्री सुप्रतिबुद्धसूरि. यहांसें निर्ग्रंथ गच्छका दूसरा नाम कौटिक गच्छ हूआ.

अ–श्री सुस्थित सुप्रति बुद्धके पांच स्थविर हूए. (१) स्थविर इंद्रदिन्न. (२) स्थविर प्रिय ग्रंथ, तिससें माध्यमिका शाखा निकली. (३) स्थविर विद्याधर गोपाल, तिससें विद्याधरी शाखा निकली. (४) स्थविर ऋषिदत्त. (५) स्थविर अरिहदत्त.

ब–श्री सुस्थित सुप्रतिबुद्धके समयमें पन्नवणा सूत्र कर्त्ता श्री श्यामाचार्य हूए. तिनोंका श्री वीरात्, ३७६, वर्षे स्वर्ग. कल्पसूत्र पट्टावल्यादौ.

[३४]

(११) श्री आर्य इंद्र दिन्नसूरि. कल्पसूत्रपट्टावल्या दौ.

(३५)

(१२) श्री आर्य दिन्नसूरि. कल्पसूत्रपट्टावल्या दौ.

(३६)

(१३) श्री आर्यसिंहगिरि.

अ—आर्यसिंहगिरिका शिष्य (१) स्थविरधनगिरि. (२) स्थविरआर्यवज्रस्वामी, तिनोंसें वयरी शाखा निकली. (३) स्थविर आर्य समित, तिनसें ब्रह्मदीपिका शाखा निकली. (४) स्थविर अरिहदिन्न. (५) स्थविर आर्य शांतिश्रेणिक, तिनसें उच्चनागरी शाखा निकली. आर्य शांतिश्रेणिकके चार शिष्य. (१) स्थविर आर्य श्रेणिक, तिससें आर्यश्रेणिक शाखा. निकली. (२) स्थविर आर्यतापस, तिससें आर्य तापसी शाखा. (३) स्थविर आर्य कुबेर, तिससें आर्य कुबेरी शाखा. (४) स्थविर आर्य ऋषिपालित, तिससें आर्य ऋषिपालित शाखा. कल्पसूत्रपट्टावल्यादौ.

ब—श्रीवीरात्, ४५३, वर्षे गर्दभिल्ल राजाका उच्छेदक दूसरा कालिकाचार्य. श्रीवीरात् ४५३, वर्षे भृगुकच्छ

(भडौच) में विद्याचक्रवर्त्ति श्रीआर्यखपुटाचार्य.

श्रीवीरात् ४६४–४६७ वर्षे आर्यमंगुआचार्य, वृद्धवादी, पादलिप्तसूरि, तथा विक्रमादित्य प्रतिबोधक श्री सिद्धसेन दिवाकर. श्रीवीरात्, ४७०. वर्षे विक्रमादित्य. यहवृत्तांत प्रबंध चिंतामणि, आवश्यकसूत्र, आचारप्रदीपादि ग्रंथोमें हैं.

(३७)

(१४) श्री वज्रस्वामी, श्री वीरात्, ५८४, वर्षे स्वर्ग. इनोंके समयमें, १०, मापूर्व, चौथा संहनन, और चौथा संस्थान, यहव्यच्छेद हो गये. तथा इनोंके समय दूसरा बारांवर्षी काल पडा. इनोंका वृत्तांत आवश्यक सूत्र, प्रभाविक चरित्र, परिशिष्ट पर्वन्, कल्पसूत्रादि ग्रंथोमें है.

अ–श्रीवज्रस्वामीका शिष्य स्थविर वज्रसेनसूरि, इनोंसे नागली शाखा निकली. (१) दूसरा शिष्य आर्यपद्म स्थविर, इनोंसे आर्यपद्म शाखा निकली. (२) स्थविर आर्यरथ, तिनसें आर्यज्यंत शाखा निकली. श्री आर्यरथ, १, तिसका शिष्य आर्यपूसगिरि, २, तत्पट्टे आर्य फल्गुमित्र, ३, आर्य धनगिरि, ४, आर्य शिवभूति, ५, आर्य भद्र, ६, आर्य नक्षत्र,

७, आर्य रक्ष, ८, आर्य नाग, ९, आर्य जेहिल, १०, आर्य विष्णु, ११, स्थविर आर्य कालक, १२, स्थविर आर्य संपलीय, तथा आर्य भद्र, १३, आर्य वृद्ध, १४, आर्य संघपालित, १५, आर्य हस्ति, १६ आर्य धर्म, १७, आर्य सिंह, १८, आर्य धर्म, १९, आर्य सिंह, २०, आर्य जंबू, २१ आर्य नंदिक, २२, आर्य देसीगणि, २३, आर्य स्थिरगुप्तक्षमाश्रमण, २४, स्थविर कुमारधर्म, २५, स्थविर देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण. २६ यह पट्टावली वल्लभी वाचनाके कल्पसूत्रानुसारहै. श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणने श्रीवीरात्, ९८०, वर्ष पीछे एक कोटि पुस्तक ताडपत्र ऊपर लिखे. यहांसे पुस्तकारूढ हूये. यह कथन श्री आवश्यक सूत्र, कल्पसूत्र, प्रभाविक चरित्र, आत्मप्रबोधादि ग्रंथोमें हैं.

ब–माथुरी वाचना होनेंसें श्री नंदीसूत्रमें इस तरेसें श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणवाली पट्टावली लिखिहै, सोइ लिख दिखाते है.

श्री सुधर्मस्वामी. (१) श्री जंबूस्वामी. [२] श्री प्रभवस्वामी. [३] श्री सय्यंभवस्वामी. [४] श्री यशोभद्रस्वामी. [५] श्री संभूतिविजय, तथा भद्रबाहुस्वामी. [६] श्री स्थूलभद्रस्वामी. [७] श्री आर्य म-

हागिरि, तथा आर्य सुहस्तिसूरि. [८] श्री बहुल, और बलिस्सह. (९) श्री स्वातिसूरि. (१०) श्री श्यामाचार्य. [११] श्री शांडिलाचार्य. (१२) श्री जीतधर. (१३) श्री आर्य समुद्र. (१४) श्री आर्य मंगु. (१५) श्री आर्य नंदीलक्षण. (१६) श्री आर्य नागहस्ति. (१७) श्री रेवतीनक्षत्र. (१८) श्री सिंहाचार्य. [१९] श्री स्कंदिलाचार्य. (२०) श्री हेमवत्. (२१) श्री नागार्जुन. (२२) श्री गोविंदवाचक. (२३) श्री भूतदिन्न. (२४) श्री लोहिताचार्य. (२५) श्री दूष्यगणि. (२६) श्री देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण. (२७)

(२०) वीशमें पाट ऊपर जो श्री स्कंदिलाचार्य लिखेहै, सो किसी किसी पट्टावलीमें चौवीशमें पाट ऊपर लिखेहै. सबबकि, उस पट्टावली लिखने वालेने, श्री महावीर स्वामीसें पट्टावली लिखनी शुरु करीहै, और श्री भद्रबाहु स्वामी. १, श्री आर्य सुहस्तिसूरि, २, और श्री बलिस्सहसूरि, ३, इन तीनो आचार्य कों अलग अलग पाट ऊपर लिखेहै.

(२३) तेवीसमें पाट ऊपर जो श्री गोविंदवाचक लिखेहै, सो किसी किसी स्थानमें नहीभी लिखे है.

(१५) श्री वज्रसेनसूरि, श्री वीरात्, ६२०, वर्षेस्वर्ग. इनके समय तीसरा बारां वर्षी काल पडा, जोकि श्री वज्रस्वामीके अंत समयमें विद्यमान थाँ.

अ–श्री वीरात्, ५४८, वर्षे श्री गुप्ताचार्य त्रैराशिकके जीतनेवाले.

श्री वीरात्, ५५३, भद्रगुप्ताचार्य.

श्री वीरात्, ५२५, श्री शत्रुंज्य तीर्थोच्छेद.

श्री वीरात्, ५७०, जावडशाहने शत्रुंज्य तीर्थका उद्धार कराया.

श्री वीरात्, ५९७, श्री आर्य रक्षितसूरि.

श्री वीरात्, ६१६, छसों सोलां दुर्बलिका पुष्पाचार्य.

श्री वीरात्, ५९५, वर्षे कोरंटन नगरमें तथा सत्यपुरमें नाहडमंत्रीके बनाये जिनमंदिरमें, श्री जज्ञकसूरिने, श्री महावीरस्वामिकी प्रतिमाकी प्रतिष्टा करी. यह कथन पट्टावली आदि ग्रंथोमें है.

ब–श्री वज्रसेन सूरिके चार शिष्य हूए. (१) श्री चंद्रसूरि, तिनसें चांद्रकुल निकला. (२) श्री नागेंद्रसूरि, तिनसें नागेंद्रकुल निकला. (३) श्री निवृतसूरि, तिनसें निवृतकुल निकला. इस निवृत कुलमें विक्रमात्,

७७२, वर्षे श्री आचारांग, सूत्रकृतांग सूत्रोंकी वृत्ति-कर्त्ता, श्री शीलांकाचार्य. तथा विक्रमात्, ११२०, वर्षे ओघनिर्युक्ति वृत्तिकर्त्ता, श्री द्रोणाचार्य. [४] विद्याधरसूरि, तिनसें विद्याधर कुल निकला. इस कुलमें विक्रमात् ५८५, वर्षे श्री हरिभद्रसूरि, १४४४ ग्रंथकर्त्ता. यह कथन कल्पसूत्र पट्टावली आदि ग्रंथोमें है.

[३९]

(१६) श्री चंद्रसूरि. इनोंसें निर्ग्रंथ गच्छका तीसरा नाम चंद्रगच्छ पडा. पट्टावल्यादौ.

अ—श्री वीरात्, ६०९, वर्षे कृष्णसूरिके शिष्य, शिवभूति सहस्रमल्लने दिगंबर मत निकाला. इसका विशेष वर्णन श्री विशेषावश्यक सूत्रादि ग्रंथोमें है. तिस शिवभूति सहस्रमल्लके दो शिष्य हूये. कोडिन १, और, कोष्टवीर. २. पीछे धरसेन, १, भूतिबली, २, पुष्पदंत ३ हूए. श्री वीरात्, ६८३, वर्ष पीछे भूतिबली और पुष्पदंतने ज्येष्टसुदि ५, के दिन शास्त्र बनाने प्रारंभ करे. ७००००, श्लोक प्रमाण धवल, ६००००, श्लोक प्रमाण जयधवल, और, ४००००. श्लोक प्रमाण महाधवल. यह तीनों ग्रंथ अबभी क-

र्णाटक देशमें विद्यमान है. ऐसा सुणते है. तिन ग्रंथोमेंसें नेमिचंद्रने चामुड राजाके पढने वास्ते गोमटसार रचा. धवल जयधवल, महाधवल, इन तीनो से पहिला शास्त्र दिगंबरोने करा नही है. पीछे दिगंबरोमें चार शाखा हूइ. नंदी, १, सेन, २, देव, ३, और सिंह. ४. पीछे चार संघ हूये. काष्टासंघ, १, मुलसंघ, २, माथुरसंघ, ३, और गोप्यसंघ. ४. पीछे वीशपंथी, तेरापंथी, गुमानपंथी, तोतापंथी आदि फांटे हूये. तोतापंथी मंदिरमें प्रतिमाके ठिकाने पुस्तक पूजते है. प्रथमतो शिवभूतिने नग्नपंथ काढा, फेर स्त्रीकों मोक्ष नही, केवलीकों कवल आहार नही इत्यादि करतें करतें [८४] बातोंका फेर कहने लग गये. इनका खंडन बहोत विस्तार सहित स्याद्वाद रत्नाकरावतारिका, वादीवेताल शांतिसूरिकृत उत्तराध्ययन बृहद्वृत्ति आदि ग्रंथोमें है.*

अब आज कालतो तेरापंथीओंने वहु तही कपोल कल्पना खडी करी है, जोकि दिगंबर मतके प्राचीन, और नवीन ग्रंथोंके मिलानसें मलुम होताहै.

* संक्षेपमात्रतो खंडन श्री तत्व निर्णय प्रसादमें ग्रंथकर्त्ताने लिखा है.

(१७) श्री सामंतभद्रसूरि. यह आचार्य प्रायः वनमें-
ही रहतेथे, जीससें लोकोंने वनवासी गच्छ
नाम रख दीया. तबसें निर्ग्रंथ गच्छका चौथा
नाम वनवासी गच्छ हूआ.

(४१)

(१८) श्री वृद्धदेवसूरि. श्री वीरात्, ६९६, वर्षे.

(४२)

(१९) श्री प्रद्योतनसूरि.

(४३)

(२०) श्री मानदेवसूरि लघुशांति कर्त्ता. इन आचा-
र्योंने तक्षशिला नगरीके संघको मरीशांत होने
वास्ते नडोल नगरसें लघुशांति स्त्रोत्र रच
कर भेजा.

(४४)

(२१) श्री मानतुंगसूरि. भक्तामरादि स्तवकर्त्ता तथा
वृद्ध भोजादि राजा प्रतिबोधक.

(४५)

(२२) श्री वीराचार्य. इनोंने श्री वीरात्, ७७०, वर्षे ना-
गपुरमें श्री नमिनाथकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठाकरी.

(४६)

(२३) श्री जयदेवसूरि. श्री वीरात्, ८२६, वर्षे.

(४७)

(२४) श्री देवानंदसूरि. श्री वीरात्, ८४५, विक्रमात्, ३७५, वर्षपीछे वल्लभीनगरीकाभंग. किसीस्थानमें विक्रमात्, ४४०, वर्षे वल्लभीभंग लिखाहै.

अ–वल्लभीके भंगमें श्री गंधर्व वादिवेताल शांतिसूरिनें संघकी रक्षा करी.

(४८)

(२५) श्री विक्रमसूरि, श्री वीरात्, ८८२.

(४९)

(२६) श्री नरसिंहसूरि.

(५०)

(२७) श्री समुद्रसूरि.

अ–श्री वीरात्, ९९३, वर्षपीछे श्री कालिकाचार्यने पंचमीसें चौथकी संवत्सरीकरी. यहकथन, श्री निशीथचूर्णि,व्यवहारसूत्र, मूलशुद्धि प्रकरणादि ग्रंथोंमें है.

व–श्री वीरात्, १०००, वर्षे सत्यमित्राचार्य के साथ सर्व पूर्वव्यवच्छेद हूए.

(५१)

(२८) श्री मानदेवसूरि.

माश्रमण. ध्यानशतकका कर्त्ता.

(५२)

(२९) श्री विबुधप्रभसूरि.

(५३)

(३०) श्री जयानंदसूरि.

(५४)

(३१) श्री रविप्रभसूरि. इनोंने श्री वीरात्, ११७०, वर्षे नडोलनगरमें श्री नेमिनाथकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करी.

अ–श्री वीरात्, ११९०, उमास्वाति युगप्रधान.

(५५)

(३२) श्री यशोदेवसूरि. किसी पट्टावलीमें श्री यशोदेवसूरिके पाट उपर श्री प्रद्युम्नसूरि, और प्रद्युम्नसूरिके पाटउपर श्री मानदेवसूरि उपधानवाच्य ग्रंथ कर्त्ता लिखे है, परंतुयहां उनोंकी अपेक्षा रहित लिखनेमें आया है.

अ–श्री वीरात्, १२७०, विक्रमात् ८००, वर्षे भाद्रशुदि तीजके दिन बप्पभट्ट आचार्यका जन्म हूआ. जिसने ग्वालीयरके आम राजाकों जैनी बनाया. विक्रमात्, ८९५, वर्षे स्वर्ग. इन श्री बप्पभट्टाचार्यका वृत्तांत

प्रभाविक चरित्र, प्रबंध चिंतामणि आदि ग्रंथोंमें है.

—श्री वीरात्, १२७२, विक्रमात्, ८०२, वर्षे वनराज राजाने अणहिलपुर पाटण वसाया.

(५६)

(३३) श्री विमलचंद्रसूरि.

(५७)

(३४) श्री उद्योतनसूरि.

(५८)

(३५) श्री सर्वदेवसूरि. इनोंको श्री वीरात्, १४६४, वर्षे वटवृक्ष हेठे सूरिपद देनेसें निग्रंथगच्छका पांचमा नाम वडगच्छ पडा. इनोंने विक्रमात्, १०१०, वर्षे राम सैन्यपुरमें श्री ऋषभदेव चैत्य तथा श्री चंद्रप्रभ चैत्यकी प्रतिष्ठा करी. तथा चंद्रावतीमें कुंकण मंत्रीकों प्रतिबोधके दीक्षा दीनी.

अ—विक्रमात्, १०२६, तक्षशिलाका नाम गजनी हूआ. विक्रमात्, १०२९, धनपाल पंडितने देशी नाम माला बनाइ.

ब—विक्रमात्, १०९६, थिरापद्रीय गच्छमें उत्तराध्ययन सूत्र बृहद्वृत्ति कर्त्ता श्री वादी वेताल शांति सूरिका स्वर्ग.

(५९)

(३६) श्री देवसूरि.

(६०)

(३७) श्री सर्वदेवसूरि.

(६१)

(३८) श्री यशोभद्रसूरि, तथा श्री नेमिचंद्रसूरि, दोनों गुरुभाइ, और दोनोंही श्री सर्वदेवसूरिके पाट उपर हूअे, जिसमें श्री नेमिचंद्रसूरिकी शाखा अलग हूई.

अ—श्री नेमिचंद्रसूरि. (१) श्री उद्योतनसूरि. (२) श्री वर्द्धमानसूरि. (३) श्री जिनेश्वरसूरि तथा श्री बुद्धि सागरसूरि. (४) इनोंनें अष्टकवृत्ति, पंचलिंगी प्रकरण, और बुद्धिसागर व्याकरणादि ग्रंथ बनाये है.

श्री जिनचंद्रसूरि, संवेग रंगशाला ग्रंथकर्त्ता. (५) श्री अभयदेवसूरि, नवांगीवृत्ति, तथा श्री स्थंभन पार्श्वनाथ प्रतिमा प्रगट कर्त्ता. विक्रमात्, ११३५. मतांतरसें ११३९, में स्वर्ग. (६) श्री जिनवल्लभसूरि. पिंडविशुद्धि, भवारिवारण, वीरचरित्र, षडासीप्रकरण, संगपट्टक आदि ग्रंथकर्त्ता. (७) श्री जिनदत्तसूरि. संदेह दोलावली. और सार्द्ध शतक वृत्ति कर्त्ता. (८)

श्री जिनचंद्रसूरि. (९) श्री जिनपतिसूरि. (१०)
श्री जिनेश्वरसूरि. (११) श्री जिनप्रबोधसूरि. (१२)
श्री जिनचंद्रसूरि. (१३) श्री जिनकुशलसूरि. (१४)
श्री जिनप्रभसूरि. (१५) श्री जिनलब्धिसूरि. (१६)
श्री जिनचंद्रसूरि. (१७) श्री जिनोदयसूरि. (१८)
श्री जिनराजसूरि. (१९) श्री जिनभद्रसूरि. (२०)
श्री जिनचंद्रसूरि. (२१) श्री जिनसमुद्रसूरि. (२२)
श्री जिनहंससूरि. (२३) श्री जिनमाणिक्यसूरि. (२४)
श्री जिनचंद्रसूरि. (२५) श्री जिनसिंहसूरि. (२६)
श्री जिनराजसूरि. (२७) श्री जिनरत्नसूरि. (२८)
श्री जिनचंद्रसूरि. (२९) श्री जिनसौख्यसूरि. (३०)
श्री जिनभक्तिसूरि. (३२) श्री जिनलाभसरि. (३३)
श्री जिनहर्षसूरि. (३४)

(६२)

(३९) श्री मुनिचंद्रसूरि. इनोंने धर्म विंदु, योग विंदु, उपदेशपद आदि ग्रंथोकी टीका करी. तथा अपने गुरुभाइ चंद्रपभकों समजानेके वास्ते पाक्षिक ससातिका करी.

अ—संवत्, ११५९, में श्री मुनिचंद्रसुरिके वडे गुरुभाइ-चंद्रपभने पौर्णिमीयक मत निकला. अर्थात् पाक्षिक

पूर्णमासीके रोज करनी. इस कालमां यह मतप्रायः लुप्त हो गया है, नाम मात्र रहा है. पौर्णिमीय मतमेंसें निकलके नरसिंह उपाध्यायनें संवत, १२१३, मतांतरसें १२१४, तथा १२३३, में अंचलमत निकाला.

[६३]

[४०] श्री अजितदेवसूरि. दिगंबरजेता. इनोंनें संवत्, १२०४, में फलवर्धि ग्राममें चैत्यबिंबकी प्रतिष्ठा करी; सो तीर्थ अद्यापि पर्यंत विद्यमान है. तथा आरासणमें श्री नेमिनाथकी प्रतिष्ठा करी. तथा ८४०००, चौराशहिजार श्लोक प्रमाण स्याद्वाद रत्नाकरनामा ग्रंथ बनाया. इनोंका, १२२०, में स्वर्गवास हूआ.

अ—श्री अजितदेवसूरिके समयमें श्री देवचंद्रसूरिके शिष्य, साढेतीनक्रोड ३५००००००, श्लोकोंके कर्त्ता, कलिकालमें सर्वज्ञविरुद धारक, पाटणके राजा कुमारपाल प्रतिबोधक, श्री हेमचंद्रसूरि हूए. इनोंका जन्म विक्रम संवत्, ११४५, दीक्षा संवत्, ११५०, सूरिपद, ११६६, और, १२२९, में स्वर्ग. इनोंका वृत्तांत प्रबंधचिंतामणि, कुमारपाल चरित्रादि ग्रंथोमें है.

ब—विक्रम संवत्, १२०४, में खरतरगच्छ नाम पडा.

(६४)

(४१) श्री विजयसिंहसूरि.

(६५)

(४२) श्री सोमप्रभसूरि.

-विक्रमात्, १२३६, साढ पूनमीया मत निकला.

श्री वीरात्, १६९२, वर्षे वाग्भट्ट मंत्रीने सादतीन

क्रोड रूपक खरचके श्री शत्रुंजय तीर्थका, १४, चौ

हमा उद्धार कराया.

व-विक्रमात्, १२५०, आगमीयामत निकला.

(६६)

(४३) श्री मुनिरत्नसूरि.*

(६७)

[४४] श्री जगच्चंद्रसूरि. विक्रम संवत्, १२८५,

में इनआचार्यका बडा भारी तप देखके चितोडके

राणेने "तपागच्छ" नाम दीया. यह निर्ग्रंथ गच्छका

छठ्ठा नाम हूआ.

[६८]

[४५] श्री देवेंद्रसूरि. विक्रमात्, १३२७ स्वर्ग.

* किसी किसी पट्टावलिमें 'मुनिरत्नसूरि' के ठिकाने 'मणिरत्नसूरि' नाम लिखाहै, तथा श्री सोमप्रभसूरि और श्री मणिरत्नसूरि ए श्री विजयसिंहसूरिके पाट ऊपर होनेसें एकही नंबरमें लिखेहैं.

(७०)

(४७) श्री सोमप्रभसूरि. विक्रमात, १३७३, स्वर्ग.

(७१)

(४८) श्री सोमतिलकसूरि. विक्रमात, १४२४, स्वर्ग.

(७२)

(४९) श्री देवसुंदरसूरि. विक्रमात, १४५६, स्वर्ग.

(७३)

(५०) श्री सोमसुंदरसूरि. विक्रमात, १४९९, स्वर्ग.

(७४)

(५१) श्री मुनिसुंदरसूरि. विक्रमात १५०३, स्वर्ग.

(७५)

(५२) श्रीरत्नशेखरसूरि. विक्रमात, १५१७, वर्षे स्वर्ग. इनोंने श्राध्ध प्रतिक्रमण वृत्ति, श्राध्ध विधि सूत्रवृत्ति, लघुक्षेत्र समास, और आचार प्रदीपादि ग्रंथ रचेहै.

अ—श्री रत्नशेखर सूरिके समयमें संवत, १५०८, में जिनप्रतिमा, और पंचांगी उथ्थापक लुं-

कानामा लिखारीने लुंपक (लौंका) मत
जैनशास्त्रोंसें विरुद्ध स्वकपोलकल्पित निका
ला, परंतु संवत् १५३३–३४, तक इसका उ-
पदेश किसीने माना नही. पीछे, १५३३-३४,
मेही एक भूणा नामा वाणिया लुंकेकों मिला,
तिसने लुंकेका उपदेश माना. लुंकेके कहनेसें
तिस भूणेने विना ही गुरुके दीये अपने आप
वेष पहना, और मूढ लोगोको जैनमार्गसें भ्र-
ष्ट करना शुरु कीया. लौंकेने अपने मतानु
कूल, ३१, इकतीस शास्त्र सच्चे माने. और इ-
कतीसमें भी जहांजहां जिनप्रतिमाका अधि-
कार आतारहा, तहांतहां अपनी कल्पनासें
मन घडित खोटा अर्थ करने लगा. इस लुंपक
मतमेंसें संवत्, १५७०, में बीजा नामा वेषध-
रने बीजा नामा मत निकाला. और संवत्,
१५७२, में रूपचंद सराणेने स्वयमेवभेष पेह
नके नागोरी लुंपकमत निकाला. इसने प्रति
माका उथ्थापन नहीं करा.
लुंकेका निकाला हूआ जो मत है, उसको गु

जराती लौंका कहतेहै. तिनमेंसेंभी उतराधी विगेरे लौंके फिर प्रतिमाकों मानने लगगयें, और जिनका मुहबंधे ढुंढकोंके साथ मेल रहा, उनोंने प्रतिमाका मानना नही कार करा.

च—लुंपक मतमेंसें संवत्, १७०९, में सुरतके वासी वोहरा वीरजीकी बेटी फूलांबाईकी गोदी लीये बेटे लवजी नामकने, लुंपक मतकाजो उसका गुरुथा, उससें कई बातें करके, अपने आप निकलके, साथ औरांनु लेके, मुहुपरकपडा बांधके, अलगमत निकाला जिस मतकों लोग “ ढुंढीये ” कहतेहै. ईन ढुंढीयोंका मत जबसें निकलाहै, तबसें आज पर्यंत इनके मतमें कोईभी विद्वान् नही हुआहै. क्योंकी, यहलोक कहते है, कि व्याकरण, कोश, काव्य, छंदः, अलंकार, साहित्य, तर्कशास्त्रादि पढनेसें बुध्धि मारी जातीहै. असलीमें इनोंका व्याकरणा शास्त्र नही पढनेका यह तात्पर्य्य है, कि

व्याकरणादिके सबबसें यथार्थ शास्त्रोंका अर्थ मालुम होताहै. जब यथार्थ मालुम होया, कि तत्काल उनोंका मत जूठा सिध्ध होजाताहै. इसवास्ते पढना ही बंद करदीया है, कि जिससें अपने माने स्वकपोल कल्पित मतकों हानी नहोवे.

तथा यहलोक, ३१, इकतीश शास्त्रतो लुंपकवालेही मानते है; परंतु व्यवहारशास्त्र बत्तीसमा ज्यादा मानने लगे. तथा आवश्यक सूत्रजो असलीथा, सो लौंकेने प्रतिमा के सबबसें मानना छोडदीया, और स्वकपोल कल्पित नवा खडा करलीया. इन ढुंढकोंनें दोनोंही छोडके, अपने मनमाने अडंगे मारके नवाही खडाकर लीया. येह ढुंढीयेभी प्रतिमा, और प्रतिमाका पूजना (मूर्त्ति पूजन) नही मानते इनोंका मत जैन शास्त्रोंसें विपरीत है. लोकोंमें यह लोक जैनी कहाते है, परंतु वास्तवीकमें जैनी नही है. इन ढुंढीयांके, २२, बाईस फांटे निकले है, जो कि बाइस टोलेके नामसें प्रसिध्ध है, सो बाइस टोलें नीचे लिखे जाते है.

धर्मदासका टोला (१) धनाजीका टोला (२) इस धनाजीका चेला भूदर, तिसका चेला रघुनाथ, तिसका चेला भीखम, तिस भीखमने संवत्, १८१८, में तेरा पंथी सुहबंधोका पंथ चलाया. तीसरा लालचंद का टोला (३) रामचंदका टोला (४) मनजीका टोला (५) वडापृथुराजका टोला (६) बालचंदका टोला (७) लघुपृथुराजका टोला (८) मूलचंदका टोला (९) ताराचंदका टोला (१०) प्रेमजीका टोला (११) पदार्थजीका टोला (१२) खेतशीका टोला (१३) लोकमनका टोला (१४) भवानीदासका टोला (१५) मलूकचंदका टोला (१६) पुरुषोत्तमका टोला (१७) मुकुटरायका टोला (१८) मनोहरजीका टोला (१९) गुरूसाहेका टोला (२०) समर्थजीका टोला (२१) और वाघजीका टोला (२२)

(७६)

(५३) श्री लक्ष्मीसागर सूरि

(७७)

(५४) श्री सुमतिसाधु सूरि.

(७८)

(५५) श्री हर्मविमल सूरि. इनोंसे विमल शाखा

चली, इनोंके समय, १५६२, में क
णियेने कडुयामत निकाला.

(७९)

(५६) श्री आनंद विमल सूरि. विक्रमात १५९६.
स्वर्ग, इनोंकेसमय, १५७२, में नागपुरीय
तपा गच्छसें अलग होकर पासचंदने
पासचंद मत निकाला.

(८०)

(५७) श्री विजयदान सूरि. विक्रमात, १६२
वर्षे स्वर्ग.

(८१)

(५८) श्री जगद्गुरु श्री हीरविजय सूरि वि०
१६५२, स्वर्ग. इनोकावर्णन हीरसौभाग्य
काव्यमें है.

(८२

(५९) श्री विजयसेन सूरि. विक्रमात, १६७१, स्वर्ग.

(८३)

६० श्री विजयदेव सूरि. विक्रमात, १६८१; श्री वि
जयसिंह सूरि, विक्रमात, १७०८. इनोंसें वि

जय गच्छ प्रसिद्ध हूआ.* तथा श्री विजय आणंद सूरि. इनोंसें आणंद सूर गच्छ निकला. श्री विजयदेवसूरि, तथा विजय आणंदसूरी, दोनों गुरु भाईथे, और एकही पाट पर हूयेहै.

अ—श्री विजय देव सूरिके समय विमल गच्छमें ज्ञानविमलसूरिहूए. तथा इनोंहीके समय शांतिदास शेठकी मददसें सागर गच्छ निकला.

ब—श्री विजयसिंह सूरिके शिष्य सत्यविजयगणि तथा श्री मद्यशो बिजयोपाध्याय, इन दोनोंने श्री विजयसिंहसूरिकी आज्ञासें क्रिया उध्धार करा. तथा शिथिला चारी साधुओंसें, और ढुंढक मती पाखंडीयोंसें जूदे मालुम होनेके वास्ते, पीतवस्त्र धारणकरा, सो संप्रदाय अ-बतक चला आता है. और गुजरात विगेरे देशोंमें प्रायःसर्व जगे प्रसिध्धहै.

श्री विजयसिंह सूरिसें लेके इस वृक्षके कर्त्ता

*जिसमें इस इतिहास रूप वृक्षके लिखने वालेहुयेहै.

तककी पट्टावली नीचे लिखते है.

(१) श्री विजयसिंह सूरि. (२) श्री सत्यविजय गणि, तथा श्रीयशोविजयोपाध्याय. (३) श्री सत्यविजय गणिका शिष्य श्री कर्पूर विजय गणि. (४) श्री क्षमाविजय गणि. (५) श्री जिनविजय गणि. [६] श्री उत्तम विजय गणि. (७) श्री पद्म विजय गणि. (८) श्री रूप विजय गणि. (९) श्री कीर्ति विजय गणि. (१०) श्री कस्तूर विजय गणि. (११) श्री मणि विजय गणि. (१२) श्री बुद्धि विजयजी महाराज. इनोंके लघुशिष्य श्री आत्मारामजीने यह जैन मत वृक्ष बनाया.

श्री आत्मारामजीने संवत्, १९१०, में मृगसीर शुदि, ५, के रोज ढुंढक मतकी दीक्षा लीनी. संवत्, १९३२, में श्री अहमदावाद जाके श्री बुद्धि विजयजी महाराजजीके पास सनातन जैनधर्म, जो कि श्री महावीर स्वामीसें लेके आज पर्यंत अविच्छिन्नपणें चलता है, सो अंगीकार करा. और मनः कल्पित असत्य ढुंढक मतका त्यागन, करा. साथमें कितनेही साधुओंकों, तथा हजारों श्रावक

श्राविकाओं कोंभी, जैनाभास ढुंढक मत त्यागन करवाया, और सत्य धर्म अंगीकार करवाया. संवत्, १९४३, में कार्तिक वदि पंचमी (पंजाबी मृगसीर वदि पंचमी) के रोज, श्री शत्रुंजय तीर्थो परि, चतुर्विध संघने "सूरिपद" दीना, जिसमें "श्री मद्विज्यानंद सूरि," ऐसा नाम स्थापन करा.

(८४)

(६१) श्री विजयदेवसूरि, तथा श्री विजयसिंह सूरि के पाट ऊपर श्री विजय प्रभसूरि.

वि०, १७४९.

(८५)

(६२) श्री विजयरत्न सूरि.

(८६)

(६३) श्री विजय क्षमा सूरि. यहां से बहोतही शिथिलाचार प्रचलित हूआ.

(८७)

(६४) श्री विजय दया सूरि.

(८८)

(६५) श्री विजय धर्म सूरि.

(८९)

(६६) श्री विजय जिनेंद्र सूरि.

(९०)

(६७) श्री विजय देवेंद्र सूरि.

(९१)

(६८) श्री विजय धरेणेंद्र सूरि.

(९२)

(६९) श्री विजयराज सूरि.

क

॥ गुर्जरदेश भूपावलिः ॥

श्री मन्महावीर स्वामीके पीछे गुजरात देशमें जिनजिन राजाओंका राज्य हूआ, तिनके नाम.

जिस रात्रिमें श्री महावीर स्वामी मोक्ष गये, तिस रात्रिमें उज्जैनका पालक नामा जैनी राजा हूआ, तिसका राज्य, ६०, वर्ष.

नवनंद जैनीराजे, तिनोंका राज्य, १५५, वर्ष.

चंद्रगुप्तसें लेकर मौर्य वंशके जैनराजाओंका राज्य, १०८, वर्ष.

पुष्पमित्र जैनी राजा, ३०, वर्ष.

बलमित्र, भानुमित्र जैन राजाओंका, ६०, वर्ष.
नरवाहन राजा, ४०, वर्ष.
गर्दभिल्ल राजा, १३, वर्ष.
शक राज्य, ४, वर्ष.
श्रीवीरात्, ४७०, वर्षे विक्रम जैनी राजा, ८६, वर्ष.
विक्रमका पुत्र जैनी राजा, ४९, वर्ष.
शालिवाहन जैनी राजा, ५०, वर्ष.
बलमित्र जैनी राजा, १००, वर्ष.
विक्रमात्, २८५, हरि मित्र, १००, वर्ष.
वि०, ३८५, प्रियमित्र, ८०, वर्ष.
वि०, ४६५, भानुराजा, ९२, वर्ष.
आम और भोजादि सात राजे हूये, तिनोंका राज्य, २४५, वर्ष. आम राजा जैनी.
वि०, ८०२, वनराज जैनी राजा, जिसने पाटण नगर में पंचासरा पार्श्वनाथजीका मंदिर बनवाया. इसका राज्य, ६०, वर्ष. वनराजसें लेके सामंतसिंह तक सात राजे चापोत्कट (चावडा) वंशमें हूएहै. वनराजकों छोड के और छ, ६, राजे जैन मत पक्षी. इनोंका सर्व राज्य, १९६, वर्ष.

विक्रमात्, ८६२, योगराज, ३५, वर्ष.
वि०, ८९७, क्षेमराज, २५, वर्ष.
वि०, ९२२, भूवडराजा, २९, वर्ष.
वि०, ९५१, वयरसिंह, २५, वर्ष.
वि०, ९७६, रत्नादित्य, १५, वर्ष.
वि०, ९९१, सामंतसिंह, ७, वर्ष.
वि०, ९९८, मूलराज, ५५, वर्ष.
वि०, १०५३, चामुंड, १३, वर्ष.
वि०, १०६६, वल्लभराज, ६, महिने.
वि०, १०६६, दुर्लभराज, ११ वर्ष, ६, महिने.
वि०, १०७८, भीमराजा, ४२, वर्ष.
वि०, ११२०, करणराजा, ३०, वर्ष.
वि०, ११५०, सिद्धराजा जैनमिश्रित, ४९, वर्ष.
वि०, ११९९, कुमारपाल जैनीराजा, ३१, वर्ष.
वि०, १२३०, अजयपाल, ३, वर्ष.
वि०, १२३३, मूलराज, ६३ त्रेशठ वर्ष.
वि०, १२९६, २, वर्ष.

मूलराजसें लेके यह, ११, ग्यारां राजे चौलुक्य वंशीहै. इनोंका सर्व राज्य, ३००, वर्ष.

विक्रमात्, १२९८, वीरधवलराजा, १०, वर्ष.
वि०, १३०८, विशलदेव, १८, वर्ष.
वि०, १३२६, अर्जुनदेव, १४, वर्ष.
वि०, १३४०, सारंगदेव, २१, वर्ष.
वि०, १३६१, करणदेव, ७, वर्ष.
वि०, १३६८, खिदरशाह खीलची, ३२, वर्ष, ९, मास.
वि०, १४०१, मुबारकशाह, १५, वर्ष.
वि०, १४१६, हिसाबुदीन खिराम, ५, वर्ष.
वि०, १४२१, निर्मलशाह, १, वर्ष, ७, महिने.
वि०, १४२३, तहमुल, ३, वर्ष.
वि०, १४२६, महम्मदशाह, ७ वर्ष, ३ मास.
वि०, १४३३, वाहाबुदीन, १३, वर्ष.
वि०, १४४६, अल्लाउदीन, ३, वर्ष.
वि०, १४४९, सरकीफीसान, १३, वर्ष.
वि०, १४६२, वहलोललोदी, ४२, वर्ष.
वि० १५०४, , ४, वर्ष.
वि०, १५०८, शिकंदरलोदी, ३०, वर्ष, ९ मास.
वि०, १५३९, इब्राहीम, ८, वर्ष, ७ मास.
वि०, १५४७, बाबरशाह, ७, वर्ष ७, मास.

वि०, १५५५, हुमाउ, १०, वर्ष.
वि०, १५६५, शेरशाह, ५, वर्ष, ३, मास.
वि०, १५७०, सलेमशाह, ८, वर्ष, ९, मास.
वि०, १५७९, फीरोजशाह, ७, वर्ष, १, मास.
वि०, १५८६, महम्मदअली, २, वर्ष.
वि०, १५८८, अविरहाम, १, वर्ष, ९, महिने.
वि०, १५९०, सिकंदर, ७, वर्ष, ७, मास.
वि०, १५९७, हिमाउ, ७, वर्ष, ७, मास.
वि०, १६०५, अकबर, ५१, वर्ष, ७, मास.
वि०, १६५७, जहांगीर, २२, वर्ष, ७ मास.
वि०, १६७९, शाहजाह, ३३, वर्ष.
वि०, १७१२, औरंगजेब, ५२, वर्ष.
वि०, १७६४, बहादरशाह, १, वर्ष.
वि०, १७६५, सें दो वर्ष, विना स्वामीके राज्य रहा.
वि०, १७६७, फरुखशेर, ५, वर्ष.
वि०, १७७२, महम्मदशाह, ३२, वर्ष.
वि०, १८०४, अहम्मदशाह,
आलमगिर, ओर अलिघोर. इति.

ख

"जैन मतमें जोत्रिषठि, ६३, शिलाका पुरुष कहे जातेहै, तिनोंका यंत्र."
"यहहरेक उत्सर्पिणी अवसर्पिणी में होतेहै, परंनामादि भिन्न होतेहैं."

१ श्रीऋषभदेव प्रथम अरिहंत.	२ श्री अजितनाथ अरिहंत.	३ श्री संभवनाथ अरिहंत.	४ श्री अभिनंदन अरिहंत.	५ श्री सुमतिनाथ अरिहंत.	६ श्री पद्मप्रभ अरिहंत.
१ प्रथम भरत चक्रवर्त्ती.	२ सगरचक्रवर्त्ती.	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०
७ श्री सुपार्श्वनाथ अरिहंत.	८ श्री चंद्रप्रभ अरिहंत.	९ श्री सुविधि नाथ अरिहंत.	१० श्री शीतलनाथ अरिहत.	११ श्री श्रेयांसनाथ अरिहंत.	१२ श्री वासुपूज्य अरिहंत.
०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	१ अश्वग्रीव प्रतिवासुदेव. १ त्रिपृष्ट वासुदेव. १ अचल बलदेव.	२ तारक प्रतिवासुदेव. २ द्विपृष्ट वासुदेव. २ विजय बलदेव.
१३ श्री विमलनाथ अरिहंत.	१४ श्री अनंतनाथ अरिहंत.	१५ श्रीधर्मनाथ अरिहंत.	०	०	१६ श्री शांतिनाथ अरिहंत.

०	०	०	३ मघवाचक्रवर्ती	४ सनत कुमार चक्रवर्ती.	५ श्री शांतिनाथ चक्रवर्ती.
३ मेरक प्रति वासुदेव. ३ स्वयंभुवासुदेव ३ भद्रबलदेव.	४ मधुकैटभ प्रति वासुदेव. ४ पुरुषोत्तम वासुदेव. ४ सुप्रभबलदेव.	५ निशुंभ प्रति वासुदेव. ५ पुरुषसिंह वासुदेव. ५ सुदर्शनबलदेव.	०	०	०
१७ श्री कुंथुनाथ अरिहंत.	१८ श्री अरनाथ अरिहंत.	०	०	०	१९ श्री मल्लिनाथ अरिहंत.
६ श्री कुंथुनाथ चक्रवर्ती.	७ श्री अरनाथ चक्रवर्ती.	०	८ सुभूम चक्रवर्ती	०	०
०	०	६ बलिप्रतिवासुदेव ६ पुरुष पुंडारिक वासुदेव. ६ आनंदबलदेव.	०	७ प्रल्हाद प्रति वासुदेव. ७ दत्त वासुदेव. ७ नंद बलदेव.	०
२० श्री मुनि सुव्रत अरिहंत.	०	२१ श्री नमिनाथ अरिहंत.	०	२२ श्री अरिष्टनेमि अरिहंत.	०
९ महापद्म चक्र	०	१० हरिषेण चक्र	११ जय चक्रवर्ती	०	१२ ब्रह्मदत्त च

०	८ रावण प्रति वासुदेव. ८ लक्ष्मणवासुदेव ८ रामचंद्रबलदेव.	०	०	९ जरासंध प्रति वासुदेव. ९ कृष्ण वासुदेव. ९ बलभद्रबलदेव.	०
		२३ श्री पार्श्वनाथ अरिहंत.	२४ श्री महावीर स्वामी अरिहंत.		
		०	०		
		०	०		

इति न्यायाम्भो निधि तपगच्छाचार्य
श्री मधि जयानन्दसूरि (आत्मारामजी)
विरचितो जैनमतवृक्ष ग्रन्थः समाप्तः